दो शब्द

श्री भगवती सूत्र के थोकड़ों का आठवां भाग पाठकों की सेवा में उपस्थित करते हुए हमें बड़ा हर्ष और सन्तोष होता है। इस भाग में श्री भगवती सूत्र के पचीसवें शतक के छब्बीस थोकड़े (थोकड़ा सं० १६७ से १६२ तक) संगृहीत हैं। यह तो पाठकों को विदित ही है कि श्री भगवती सूत्र का द्रव्यानुयोग संबंधी विषय अतिशय गहन और दुरूह है। शास्त्रीय विषय को सरल और सुबोध भाषा में यथार्थ रूप से विवेचन करने का हमारा प्रयास रहा है। इसीलिये थोकड़े सीखने सिखाने वालों में प्रचलित प्राकृत भाषा के शब्दों का प्रयोग करने में भी हमने संकोच नहीं किया है। हम अपने प्रयास में कहाँ तक सफल हुए हैं यह निर्णय करना पाठकों का काम है। पर हम अपने सुज्ञ पाठकों से यह निवेदन करना आवश्यक समझते हैं कि वे इस भाग में विषय विवेचन में यदि कहीं त्रुटि या किसी प्रकार की कमी अनुभव करें तो हमें सूचित करने का कष्ट करें ताकि हम अपनी भूल सुधार लें तथा नई आवृत्ति में आवश्यक संशोधन किया जा सके।

इस भाग में पचीसवें शतक के सभी थोकड़े दिये गये हैं अतः इस भाग का कलेवर काफी बढ़ गया है और तदनुसार इसके मूल्य में वृद्धि करनी पड़ी है। आशा है पाठकगण इसका ख्याल न करेंगे।

पहले के सात भागों की तरह इस भाग के संकलन संशोधन में भी श्रीमान् परमप्रतापी पूज्य श्री १००८ श्री गणेशीलालजी महाराज साहेब के सुशिष्य शास्त्रमर्मज्ञ पंडित रत्न स्थविर मुनि श्री पन्नालालजी महाराज साहेब का पूर्ण सहयोग रहा है। बल्कि कहना तो यह [illegible]हिये कि यह आपकी महती कृपा और परिश्रम का फल है कि हम [illegible]कों की सेवामें इस भाग को इस रूप में प्रस्तुत कर सके हैं। अतः पूज्य मुनि श्री के प्रति विनम्रभाव से कृतज्ञता प्रगट करते हैं। [illegible]ड़ों का अनुवाद एवं संपादन श्रीमान् पं० घेवरचन्द्रजी बाँठिया [illegible]तुत्र' ने किया है अतः हम उनके प्रति भी आभार प्रदर्शित करते हैं।

क—जेठमल सेठिया

विषयानुक्रमणिका

शुद्धिपत्र

पृष्ठ	पंक्ति	अशुद्ध	शुद्ध
४	१६	उत्कृप्ट	उत्कृष्ट
४	१८, २०	असख्यात	असंख्यात
१३	११	श्वास च्छ्वासपणे	श्वासोच्छ्वासपणे
१५	१७	थांड़ा	थोड़ा
१५	२२	प्रदेशावमाही	प्रदेशावगाही
१७	२४	अल्प	अल्प
१८	२४	इ ।	इसी
२३	६	एक	भेद
४३	१३	विहाए देश	विहाणादेश
४५	२३	है	हैं
५६	८	अनन्त देशी	अनन्त प्रदेशी
५७	१	कित े	कितने
६०	१	स्कन्ध	स्कन्ध सेया
६०	२१-२२	असंख्य त	असंख्यात
६५	१२	कम्‍ मान	कम्पमान
८४	११	हति	होता
८६	१५	....द्ध	शुद्धि
८६	२२	निर्ग्रन्थ	निर्ग्रन्थ
६०	१०-११	छट्ठाए वडिया	छट्ठाए वडिया
६०	१५	लाक	लोक
६३	१४	भगयत्ति	भगयती
६८	८	असंयन	असंयम
६६	३	न सन्नोवउत्ता	नोसन्नोवउत्ता
१०२	१३	भाव	भव
१०४	३	फपाय	कषाय

पृष्ठ	पंक्ति	अशुद्ध	शुद्ध
११४	११	छेदोपस्थानीय	छेदोपस्थापनीय
११४	१८	सूक्ष्मसंपराय	सूक्ष्म सम्पराय
११८	२	इसो	इसों
१२८	२२	उत्कृष्ट	उत्कृष्ट

उपरोक्त अशुद्धियों के सिवा अक्षर और मात्राओं के टाइप टूटे और घिसे होने से कुछ अशुद्धियाँ मालूम होती हैं। जैसे 'स' 'म' की तरह, 'र' 'प' की तरह, 'क' 'व' की तरह और 'प' 'ए' की तरह दिखाई देता है। इसी तरह ए की मात्रा अनुस्वार की तरह, ओ की मात्रा 'ां' की तरह दिखाई देती है। इ ई की मात्राएं, '' द, प्र, भ, क, त आदि कई अक्षर भी बराबर नहीं उठे हैं। 'से' में ए की मात्रा कई जगह नहीं उठी है। कहीं २ 'ध' के स्थान पर 'घ' और 'व' के स्थान पर 'ब' छप गया है। किन्तु हमने ऐसी अशुद्धियां शुद्धिपत्र में नहीं निकालीं हैं क्योंकि पूर्वापरसम्बन्ध का ख्याल रखने से पढ़ने में भूल होने की संभावना नहीं है।

थोकड़ा नं० १६७

श्री भगवतीजी सूत्र के पचीसवें शतक के पहले उद्देशे में २८ बोलों की योगों की अल्पाबहुत्व चलती है सो कहते हैं—

१—अहो भगवन्! संसारी जीव कितने प्रकार के हैं? हे गौतम! संसारी जीव १४ प्रकार के हैं—१ अपर्याप्त सूक्ष्म एकेन्द्रिय, २ पर्याप्त सूक्ष्म एकेन्द्रिय, ३ अपर्याप्त बादर एकेन्द्रिय, ४ पर्याप्त बादर एकेन्द्रिय, ५ अपर्याप्त बेइन्द्रिय, ६ पर्याप्त बेइन्द्रिय, ७ अपर्याप्त तेइन्द्रिय, ८ पर्याप्त तेइन्द्रिय, ९ अपर्याप्त चौइन्द्रिय, १० पर्याप्त चौइन्द्रिय, ११ अपर्याप्त असंज्ञी पञ्चेन्द्रिय, १२ पर्याप्त असंज्ञी पञ्चेन्द्रिय, १३ अपर्याप्त संज्ञी पंचेन्द्रिय, १४ पर्याप्त संज्ञी पंचेन्द्रिय।

२—अहो भगवन्! इन चौदह प्रकार के जीवों में जघन्य उत्कृष्ट योग आसरी कौन किससे कम ज्यादा (अल्प बहुत्व) है? हे गौतम!

१—*सबसे थोड़ा अपर्याप्त सूक्ष्म एकेन्द्रिय का जघन्य योग

*आत्म प्रदेशों के परिस्पन्दन (कम्पन) को योग कहते हैं। वीर्यान्तराय कर्म के क्षयोपशम की विचित्रता से योग अनेक प्रकार का होता है। किसी एक जीव में दूसरे जीव की अपेक्षा से अल्पयोग होता है, और किसी दूसरे

२–उससे अपर्याप्त बादरएकेन्द्रियका जघन्य योग असंख्यातगुणा

३–उससे अपर्याप्त बेइन्द्रिय का जघन्य योग असंख्यातगुणा

४–उससे अपर्याप्त तेइन्द्रिय का जघन्य योग असंख्यात गुणा

५–उससे अपर्याप्त चौइन्द्रिय का जघन्य योग असंख्यात गुणा

६–उससे अपर्याप्त असंज्ञी पञ्चेन्द्रिय का जघन्य योग असंख्यात गुणा

७–उससे अपर्याप्त संज्ञीपञ्चेन्द्रियका जघन्य योग असंख्यात गुणा

८–उससे पर्याप्त सूक्ष्म एकेन्द्रिय का जघन्य योग असंख्यात गुणा

९–उससे पर्याप्त बादर एकेन्द्रिय का जघन्य योग असंख्यात गुणा

१०–उससे अपर्याप्त सूक्ष्म एकेन्द्रिय का उत्कृष्ट योग असंख्यात गुणा

योग की अपेक्षा से उत्कृष्ट योग होता है। जीव के चौदह भेदों की अपेक्षा से प्रत्येक में जघन्य योग और उत्कृष्ट योग की गिनती करने से योग के २८ भेद होते हैं।

सूक्ष्म अपर्याप्त एकेन्द्रिय का जघन्य योग सबसे अल्प होता है क्योंकि उसका शरीर सूक्ष्म होने से और अपर्याप्त होने से अपूर्ण है इसलिये उसका योग सबसे अल्प है। उसके यह अल्पयोग कार्मण शरीर के द्वारा औदारिक पुद्गलों के ग्रहण करने के प्रथम समय में होता है। इसके बाद समय समय उसके योग की वृद्धि होती है जो कि उत्कृष्ट योग तक बढ़ती जाती है।

११–उससे अपर्याप्त बादरएकेन्द्रियका उत्कृष्ट योग असंख्यात गुणा

१२–उससे पर्याप्त सूक्ष्मएकेन्द्रिय का उत्कृष्ट योग असंख्यात गुणा

१३–उससे पर्याप्त बादरएकेन्द्रियका उत्कृष्ट योग असंख्यात गुणा

१४–उससे पर्याप्त बेइन्द्रिय का जघन्य योग असंख्यात गुणा

१५–उससे पर्याप्त तेइन्द्रिय का जघन्य योग असंख्यात गुणा

१६–उससे पर्याप्त चौइन्द्रिय का जघन्य योग असंख्यात गुणा

१७–उससे पर्याप्त असंज्ञीपञ्चेन्द्रियका जघन्य योग असंख्यात गुणा

१८–उससे पर्याप्त संज्ञीपञ्चेन्द्रियका जघन्य योग असंख्यात गुणा

१९–उससे अपर्याप्त बेइन्द्रिय का उत्कृष्ट योग असंख्यात गुणा

२०–उससे अपर्याप्त तेइन्द्रिय का उत्कृष्ट योग असंख्यात गुणा

२१–उससे अपर्याप्त चौइन्द्रिय का उत्कृष्ट योग असंख्यात गुणा

२२–उससे अपर्याप्त असंज्ञी पञ्चेन्द्रिय का उत्कृष्ट योग असंख्यात गुणा

२३–उससे अपर्याप्त संज्ञीपञ्चेन्द्रियका उत्कृष्ट योग असंख्यात गुणा

२४–उससे पर्याप्त बेइन्द्रिय का उत्कृष्ट योग असंख्यात गुणा

२५–उससे पर्याप्त तेइन्द्रिय का उत्कृष्ट योग असंख्यात गुणा

२६—उससे पर्याप्त चौइन्द्रिय का उत्कृष्ट योग असंख्यात गुणा
२७—उससे पर्याप्त असंज्ञीपञ्चेन्द्रियका उत्कृष्टयोग असंख्यातगुण
२८—उससे पर्याप्त संज्ञी पञ्चेन्द्रिय का *उत्कृष्ट योग असंख्यात गुणा

सेवं भंते ! सेवं भंते ! !

थोकड़ा नं० १६८

श्री भगवतीजी सूत्र के २५वें शतक के पहले उद्देशे में 'समयोगी विषमयोगी' का थोकड़ा चलता है सो कहते हैं—

१—अहो भगवन् ! प्रथम समय में उत्पन्न दो नैरयिक क्या समयोगी होते हैं या विषमयोगी होते हैं ? हे गौतम ! वे दोनों सिय (कदाचित्) समयोगी होते हैं और सिय (कदाचित्) विषमयोगी होते हैं । अहो भगवन् ! इसका क्या कारण ? हे गौतम ! ×आहारक नैरयिक की अपेक्षा अनाहारक

*कम्मपयड़ी (कर्म प्रकृति) में इसके ८ भेद बढ़ा करके अल्पबहुत्व किया है—२९ उससे पर्याप्त अनुत्तर विमान के देवता का उत्कृष्ट योग असंख्यात गुणा ३० उससे पर्याप्त ग्रैवेयक के देवता का उत्कृष्ट योग असंख्यात गुणा ३१ उससे पर्याप्त युगलिया तिर्यंच मनुष्य का उत्कृष्ट योग असंख्यात गुणा ३२ उससे पर्याप्त आहारक शरीर का उत्कृष्ट योग असंख्यात गुणा ३३ उससे पर्याप्त बाकी के देवता का उत्कृष्ट योग असंख्यात गुणा ३४ उससे पर्याप्त नारकी के नैरयिकों का उत्कृष्ट योग असंख्यात गुणा ३५ उससे पर्याप्त तिर्यंच पञ्चेन्द्रिय का उत्कृष्ट योग असंख्यात गुणा ३६ उससे पर्याप्त मनुष्य का उत्कृष्ट योग असंख्यात गुणा ।

×आहारक नारक की अपेक्षा अनाहारक नारक हीन योग वाला होता है

नैरयिक और अनाहारक नैरयिक की अपेक्षा आहारक नैरयिक सिय हीनयोगी (क्षीणयोगी), सिय तुल्य योगी, सिय अधिक योगी होता है अर्थात् आहारक नैरयिक की अपेक्षा अनाहारक नैरयिक हीन योगी होता है। अनाहारक नैरयिक की अपेक्षा आहारक नैरयिक अधिक योगी होता है। दो आहारक नैरयिक अथवा दो अनाहारक नैरयिक समयोगी (तुल्य योग वाले) होते हैं।

जो हीन योगी होते हैं, वे असंख्यात भाग हीन या संख्यात भाग हीन, या असंख्यात गुण हीन, या संख्यात गुण हीन, इस तरह *चौठाण वड़िया होते हैं। जो अधिक योगी होते

क्योंकि जो नारक ऋजु गति से आकर आहारक पने उत्पन्न होता है वह निरन्तर आहारक होने से पुद्गलों से उपचित (पुष्ट) होता है, इसलिये वह अधिक योग वाला होता है। जो नारक विग्रह गति से अनाहारकपने उत्पन्न होता है, वह अनाहारक होने से पुद्गलों से उपचित नहीं होता है, इसलिये वह हीन योग वाला होता है। जो नारक समान समय की विग्रहगति से अनाहारकपने उत्पन्न होते हैं, अथवा ऋजुगति से आकर आहारकपने उत्पन्न होते हैं, वे दोनों एक दूसरे की अपेक्षा समान योग वाले होते हैं।

* प्रथम समय के उत्पन्न दो नैरयिक में योगों का तारतम्य चौठाण वड़िया इस प्रकार समझना चाहिये—

(१) एक जीव एक समय का आहारक मंडूक गति से आया है और दूसरा जीव एक समय का आहारक इलिका गति से आया है। इन दोनों के योग असंख्यात भाग न्यूनाधिक हैं।

(२) एक जीव एक समय का आहारक मंडूक गति से आया है और दूसरा जीव दो समय का आहारक वक्रगति से आया है। इन

हैं वे भी असंख्यात भाग अधिक या संख्यात भाग अधिक या असंख्यात गुण अधिक या संख्यात गुण अधिक, इस तरह चौट्ठाणवड़िया अधिक होते हैं। इस कारण से नैरयिक सिय समयोगी सिय विषमयोगी होते हैं। इसी तरह २४ ही दण्डक में कह देना चाहिये।

सेवं भंते! सेवं भंते!!

थोकड़ा नं० १६६

श्री भगवतीजी सूत्र के २५ वें शतक के पहले उद्देशे में 'पन्द्रह योगों का अल्पाबहुत्व' चलता है सो कहते हैं—

१—अहो भगवन्! योग कितने प्रकार के हैं? हे गौतम! योग १५ प्रकार के हैं—१ सत्य मन योग, २ असत्य मन योग, ३ सत्यमृषा (मिश्र) मन योग, ४ असत्यामृषा (व्यवहार) मन योग। ५ सत्य वचन योग, ६ असत्य वचन योग, ७ सत्यमृषा (मिश्र) वचन योग, ८ असत्यामृषा (व्यवहार) वचन योग। ९ औदारिक काय योग, १० औदारिक मिश्र काय योग, ११ वैक्रिय काय योग, १२ वैक्रिय मिश्र काय योग, १३ आहारक काय योग, १४ आहारक

दोनों के योग संख्यात भाग न्यूनाधिक हैं।

(३) एक जीव एक समय का आहारक मंडूक गति करके आया है और दूसरा जीव एक समय का अनाहारक एक वक्र गति करके आया है। इन दोनों के योग संख्यात गुण न्यूनाधिक हैं।

(४) एक जीव एक समय का आहारक मंडूक गति से आया है और दूसरा जीव दो समय का अनाहारक दो वक्र गति से आया है। इन दोनों के योग असंख्यात गुण न्यूनाधिक हैं।

मिश्र काय योग, १५ कार्मण काय योग।

२—अहो भगवन् ! इन पन्द्रह योगों में जघन्य और उत्कृष्ट की अपेक्षा कौन किससे कम, ज्यादा या विशेषाधिक है? हे गौतम !

१–कार्मण शरीर का जघन्य योग सबसे थोड़ा है
२–उससे औदारिक मिश्र का जघन्य योग असंख्यात गुणा
३–उससे वैक्रिय मिश्र का जघन्य योग असंख्यात गुणा
४–उससे औदारिक शरीर का जघन्य योग असंख्यात गुणा
५–उससे वैक्रिय शरीर का जघन्य योग असंख्यात गुणा
६–उससे कार्मण शरीर का उत्कृष्ट योग असंख्यात गुणा
७-उससे आहारक मिश्र का जघन्य योग असंख्यात गुणा
८–उससे आहारक मिश्र का उत्कृष्ट योग असंख्यात गुणा
९–१०– उससे औदारिक मिश्र और वैक्रिय मिश्र का उत्कृष्ट योग परस्पर तुल्य असंख्यात गुणा
११–उससे व्यवहार (असत्यामृषा) मनयोग का जघन्य योग असंख्यात गुणा
१२–उससे आहारक शरीर का जघन्य योग असंख्यात गुणा
१३ से १९–उससे तीन प्रकार के मनयोग और चार प्रकार का वचनयोग, इन सात परस्पर तुल्य का जघन्य योग असंख्यात गुणा
२०–उससे आहारक शरीर का उत्कृष्ट योग असंख्यात गुणा
२१ से ३०–उससे औदारिक शरीर, वैक्रिय शरीर चार प्रकार

हैं वे भी असंख्यात भाग अधिक या संख्यात भाग अधिक या असंख्यात गुण अधिक या संख्यात गुण अधिक, इस तरह चौट्ठाणवड़िया अधिक होते हैं। इस कारण से नैरयिक सिय समयोगी सिय विषमयोगी होते हैं। इसी तरह २४ ही दण्डक में कह देना चाहिये।

सेवं भंते ! सेवं भंते ! !

थोकड़ा नं० १६६

श्री भगवतीजी सूत्र के २५ वें शतक के पहले उद्देशे में 'पन्द्रह योगों का अल्पाबहुत्व' चलता है सो कहते हैं—

१—अहो भगवन् ! योग कितने प्रकार के हैं ? हे गौतम ! योग १५ प्रकार के हैं—१ सत्य मन योग, २ असत्य मन योग, ३ सत्यमृषा (मिश्र) मन योग, ४ असत्यामृषा (व्यवहार) मन योग। ५ सत्य वचन योग, ६ असत्य वचन योग, ७ सत्यमृषा (मिश्र) वचन योग, ८ असत्यामृषा (व्यवहार) वचन योग। ९ औदारिक काय योग, १० औदारिक मिश्र काय योग, ११ वैक्रिय काय योग, १२ वैक्रिय मिश्र काय योग, १३ आहारक काय योग, १४ आहारक

दोनों के योग संख्यात भाग न्यूनाधिक है।

(३) एक जीव एक समय का आहारक संहूक गति करके आया है और दूसरा जीव एक समय का अनाहारक एक वक्र गति करके आया है। इन दोनों के योग संख्यात गुण न्यूनाधिक हैं।

(४) एक जीव एक समय का आहारक संहूक गति से आया है और दूसरा जीव दो समय का अनाहारक दो वक्र गति से आया है। इन दोनों के योग असंख्यात गुण न्यूनाधिक हैं।

मिश्र काय योग, १५ कार्मण काय योग।

२—अहो भगवन्! इन पन्द्रह योगों में जघन्य और उत्कृष्ट की अपेक्षा कौन किससे कम, ज्यादा या विशेषाधिक है? हे गौतम!

१–कार्मण शरीर का जघन्य योग सबसे थोड़ा है
२–उससे औदारिक मिश्र का जघन्य योग असंख्यात गुणा
३–उससे वैक्रिय मिश्र का जघन्य योग असंख्यात गुणा
४–उससे औदारिक शरीर का जघन्य योग असंख्यात गुणा
५–उससे वैक्रिय शरीर का जघन्य योग असंख्यात गुणा
६–उससे कार्मण शरीर का उत्कृष्ट योग असंख्यात गुणा
७-उससे आहारक मिश्र का जघन्य योग असंख्यात गुणा
८–उससे आहारक मिश्र का उत्कृष्ट योग असंख्यात गुणा
९–१०– उससे औदारिक मिश्र और वैक्रिय मिश्र का उत्कृष्ट योग परस्पर तुल्य असंख्यात गुणा
११–उससे व्यवहार (असत्यामृषा) मनयोग का जघन्य योग असंख्यात गुणा
१२–उससे आहारक शरीर का जघन्य योग असंख्यात गुणा
१३ से १९–उससे तीन प्रकार के मनयोग और चार प्रकार का वचनयोग, इन सात परस्पर तुल्य का जघन्य योग असंख्यात गुणा
२०–उससे आहारक शरीर का उत्कृष्ट योग असंख्यात गुणा
२१ से ३०–उससे औदारिक शरीर, वैक्रिय शरीर चार प्रकार

के मनयोग और चार प्रकार के वचन योग, इन दस परस्पर तुल्य का उत्कृष्ट योग असंख्यात गुणा।

सेवं भंते ! सेवं भंते !!

थोकड़ा नं० १७०

श्री भगवतीजी सूत्र के २५ वें शतक के दूसरे उद्देशे में 'जीव द्रव्य अजीव द्रव्य' का थोकड़ा चलता है सो कहते हैं-

१–अहो भगवन् ! द्रव्य कितने प्रकार के हैं ? हे गौतम ! द्रव्य दो प्रकार के हैं–जीव द्रव्य और अजीव द्रव्य।

२–अहो भगवन् ! अजीव द्रव्य कितने प्रकार के हैं ? हे गौतम ! दो प्रकार के हैं–रूपी अजीव द्रव्य और अरूपी अजीव द्रव्य।

३–अहो भगवन् ! रूपी अजीव द्रव्य के कितने भेद हैं ? हे गौतम ! चार भेद हैं–स्कन्ध, देश, प्रदेश, परमाणु पुद्गल।

४–अहो भगवन् ! अरूपी अजीव द्रव्य के कितने भेद हैं ? हे गौतम ! दस भेद हैं–धर्मास्तिकाय का स्कन्ध, देश और प्रदेश, अधर्मास्तिकाय का स्कन्ध, देश और प्रदेश, आकाशास्तिकाय का स्कन्ध, देश और प्रदेश और दसवां काल द्रव्य।

५–अहो भगवन् ! क्या रूपी अजीव द्रव्य संख्यात हैं, असंख्यात हैं या अनन्त हैं ? हे गौतम ! संख्यात नहीं, असंख्यात नहीं, किन्तु अनन्त हैं। अहो भगवन् ! इसका क्या कारण है ? हे गौतम ! परमाणु पुद्गल अनन्त हैं, दो प्रदेशी स्कन्ध अनन्त हैं यावत् दस प्रदेशी स्कन्ध अनन्त हैं। संख्यात प्रदेशी स्कन्ध अनन्त हैं। असंख्यात प्रदेशी स्कन्ध

अनन्त हैं, अनन्त प्रदेशी स्कन्ध अनन्त हैं। इस कारण से रूपी अजीव द्रव्य अनन्त हैं।

६–अहो भगवन्! क्या जीव द्रव्य संख्यात हैं, असंख्यात हैं या अनन्त हैं? हे गौतम! जीव द्रव्य संख्यात नहीं, असंख्यात नहीं, किन्तु अनन्त हैं। अहो भगवन्! इसका क्या कारण है? हे गौतम! तेईस दण्डक के जीव असंख्यात हैं और वनस्पतिकाय के जीव तथा सिद्ध भगवान् अनन्त हैं।

७–अहो भगवन्! क्या जीव द्रव्य अजीव द्रव्य के काम में आता है या अजीव द्रव्य जीव द्रव्य के काम में आता है? हे गौतम! अजीव द्रव्य जीव द्रव्य के काम में आता है किंतु जीव द्रव्य अजीव द्रव्य के काम में नहीं आता है*। जीव द्रव्य अजीव द्रव्यों को ग्रहण करके १४ बोलों में परिणमाता है—५ शरीर, ५ इन्द्रिय, ३ योग, १ श्वासोच्छ्वास। नारकी और देवता ये १४ दण्डक के जीव १२ बोलों में परिणमाते हैं (औदारिक और आहारक ये दो शरीर इनके नहीं होते हैं)। चार स्थावर के जीव ६ बोलों में परिणमाते हैं (३ शरीर, १ इन्द्रिय, १ योग, १ श्वासोच्छ्वास)। वायुकाय के जीव ७ बोलों में परिणमाते हैं (वैक्रिय शरीर बढा)। बेइन्द्रिय जीव ८ बोलों में परिणमाते हैं (३ शरीर, २ इन्द्रिय, २ योग, १ श्वा-

---

*जीव द्रव्य सचेतन होने से अजीव द्रव्यों को ग्रहण करके शरीरादि रूप से उनका परिभोग करता है। इसलिये जीव भोक्ता है। अजीव द्रव्य अचेतन होने से ग्राह्य (ग्रहण करने योग्य) है इसलिये यह जीव का भोग्य है।

सोच्छ्वास)। तेइन्द्रिय जीव ९ बोलों में (एक इन्द्रिय बढ़ी) और चौइन्द्रिय जीव १० बोलों में (एक इन्द्रिय बढ़ी) परिणमाते हैं। तिर्यंच पञ्चेन्द्रिय जीव १३ बोलों में (आहारक शरीर को छोड़ कर) परिणमाते हैं। मनुष्य १४ बोलों में परिणमाते हैं।

८–अहो भगवन् ! लोक तो असंख्यात प्रदेशी है। उसमें अनन्त जीव और अनन्त अजीव द्रव्य कैसे समाये हुए हैं ? हे गौतम कूटागारशाला तथा प्रकाश के दृष्टान्त से समाये हुए हैं।

९–अहो भगवन् ! लोक के एक आकाश प्रदेश पर कितनी दिशा से आकर पुद्गल इकट्ठे होते हैं ? हे गौतम ! निव्वाघाए (प्रतिबन्ध–रुकावट न हो तो) आसरी छहों दिशा के पुद्गल आकर इकट्ठे होते हैं, व्याघात (प्रतिबन्ध–रुकावट) आसरी सिय (कदाचित्) तीन दिशा के, सिय चार दिशा के, सिय पांच दिशा के पुद्गल इकट्ठे होते हैं। इसी तरह उपचय, अपचय तथा छेद (अलग होने) का भी कह देना चाहिए।

पांच स्थावर को छोड़ कर १९ दण्डक के जीव नियमा छह दिशा के पुद्गल लेते हैं, चय, उपचय, अपचय करते हैं, छेदते हैं। समुच्चय जीव और पांच स्थावर के जीव छह बोल (औदारिक, तैजस, कार्मण ये ३ शरीर, स्पर्श इन्द्रिय, काय योग, श्वासोच्छ्वास) आसरी सिय तीन चार पांच छह दिशा के पुद्गल लेते हैं, चय, (इकट्ठा करना) उपचय, (विशेष रूप से इकट्ठा करना) अपचय (घटाना) करते हैं, छेदते हैं।

इस प्रकार एक आकाश प्रदेश पर पुद्गल आते जाते हैं।

लोकाकाश के असंख्यात प्रदेशों में अनन्त द्रव्य समाये हुए हैं।

सेवं भंते ! सेवं भंते !!

थोकड़ा नं० १७१

श्री भगवतीजी सूत्रके २५वें शतक के दूसरे उद्देशे में 'ठिया अठिया' (स्थित अस्थित) का थोकड़ा चलता है सो कहते हैं---

१-अहो भगवन् ! जीव औदारिक शरीर पणे पुद्गलों को ग्रहण करता है तो क्या स्थित (ठिया) *पुद्गलों को ग्रहण करता है ? या अस्थित (अठिया) पुद्गलों को ग्रहण करता है ? हे गौतम ! स्थित द्रव्यों को भी ग्रहण करता है और अस्थित द्रव्यों को भी ग्रहण करता है । द्रव्य क्षेत्र काल भाव यावत्* २८८ बोल निर्व्याघात आसरी नियमा ६ दिशा का ग्रहण करता है, व्याघात आसरी सिय ३ दिशा का सिय ४ दिशा का, सिय ५ दिशा का ग्रहण करता है ।

२--अहो भगवन् ! जीव वैक्रिय शरीरपणे पुद्गलों को ग्रहण करता है तो क्या स्थित पुद्गलों को ग्रहण करता है या अस्थित पुद्गलों को ग्रहण करता है ? हे गौतम ! स्थित भी ग्रहण करता है और अस्थित भी ग्रहण करता है। द्रव्य क्षेत्र काल भाव यावत्*

---

*जितने आकाश प्रदेशों में जीव रहा हुआ है उतने आकाश प्रदेशों में रहे हुए पुद्गलों को 'स्थित' कहते हैं और उसके बाहर के क्षेत्र में रहे हुए पुद्गलों को 'अस्थित' कहते हैं । उन पुद्गलों को वहां से खींच कर जीव ग्रहण करता है।

दूसरे आचार्य ऐसा कहते हैं कि--जो द्रव्य गति रहित हैं वे स्थित हैं और जो द्रव्य गति सहित हैं वे अस्थित हैं । (टीका में)

●२८८ बोलों का वर्णन पन्नवणा सूत्र के थोकड़ों के तीसरे भाग में पृष्ठ ६६-६७ पर दिया हुआ है ।

२८८ बोल नियमा *६ दिशा का ग्रहण करता है। जिस तरह वैक्रिय शरीर का कहा उसी तरह आहारक शरीर के लिये भी कह देना चाहिये।

३—अहो भगवन्! जीव तैजस शरीरपणे पुद्गल ग्रहण करता है तो क्या स्थित को ग्रहण करता है या अस्थित को ग्रहण करता है? हे गौतम! स्थित को ग्रहण करता है किन्तु अस्थित को ग्रहण नहीं करता है। द्रव्य क्षेत्र काल भाव यावत् २८८ बोल निर्व्याघात आसरी नियमा ६ दिशा का ग्रहण करता है, व्याघात आसरी सिय ३ दिशा का, सिय ४ दिशा का, सिय ५ दिशा का ग्रहण करता है।

४—अहो भगवन्! जीव कार्मण शरीरपणे पुद्गल ग्रहण करता है तो क्या स्थित को ग्रहण करता है या अस्थित को ग्रहण करता है? हे गौतम! स्थित को ग्रहण करता है किन्तु अस्थित को ग्रहण नहीं करता है। द्रव्य क्षेत्र काल भाव यावत्

---

*'वैक्रिय शरीर योग्य द्रव्यों को ६ दिशा से ग्रहण करता है' यह जो कहा गया है, इसका अभिप्राय यह है कि उपयोग पूर्वक वैक्रिय शरीर करने वाले पञ्चेन्द्रिय जीव ही होते हैं। वे त्रस नाड़ी के मध्यभाग में होते हैं, इसलिये ६ दिशा के पुद्गल ग्रहण करते हैं। यद्यपि वायुकाय के जीवों के वैक्रिय शरीर होने से उनकी अपेक्षा लोकान्त निष्कुट के विषय में ५ दिशा का पुद्गल ग्रहण करते हैं तथापि वे उपयोग पूर्वक वैक्रिय शरीर नहीं करते हैं तथा उनका वैक्रिय शरीर प्रतिपत्तिप्रसिद्ध नहीं है। इसलिए उनकी यहां विवक्षा नहीं की गई है। इसलिये ६ दिशा का कहा गया है।

२४० बोल* निर्व्याघात आसरी नियमा ६ दिशा का ग्रहण करता है, व्याघात आसरी सिय तीन दिशा का, सिय चार दिशा का, सिय पांच दिशा का ग्रहण करता है।

५—अहो भगवन्! जीव श्रोत्रेन्द्रियपणे चक्षुइन्द्रियपणे घ्राणेन्द्रियपणे रसनेन्द्रियपणे पुद्गल ग्रहण करता है तो क्या स्थित को ग्रहण करता है या अस्थित को ग्रहण करता है? हे गौतम! स्थित को भी ग्रहण करता है और अस्थित को भी ग्रहण करता है। द्रव्य क्षेत्र काल भाव यावत् २८८ बोल नियमा ६ दिशा का ग्रहण करता है।

६—अहो भगवन्! जीव स्पर्शेन्द्रियपणे, काययोगपणे, श्वास उच्छ्वासपणे पुद्गलों को ग्रहण करता है तो क्या स्थित को ग्रहण करता है या अस्थित को ग्रहण करता है? हे गौतम! स्थित भी ग्रहण करता है अस्थित भी ग्रहण करता है यावत् औदारिक शरीर की तरह कह देना चाहिए।

७—अहो भगवन्! जीव मन योगपणे वचन योगपणे पुद्गल ग्रहण करता है तो क्या स्थित ग्रहण करता है या अस्थित ग्रहण करता है? हे गौतम! स्थित को ग्रहण करता है अस्थित को नहीं। द्रव्य, क्षेत्र, काल भाव यावत् २४० बोल नियमा ६ दिशा का ग्रहण करता है।

नारकी और देवता के १४ दण्डक में १२ बोल पाये जाते

*२४० बोलों का वर्णन पन्नवणा सूत्र के थोकड़ों के दूसरे भाग पृष्ठ ३ पर भाषा पद में दिया हुआ है।

हैं औदारिक व आहारक शरीर नहीं पाये जाते, समुच्चय की तरह छः दिशा का कह देना चाहिए किन्तु व्याघात निव्याघात भेद नहीं कहना चाहिए। चार स्थावर में छह बोल पाये जाते हैं। वायुकाय में ७ बोल पाये जाते हैं समुच्चय की तरह कहना चाहिए। बेइन्द्रिय में ८, तेइन्द्रिय में ९, चौइन्द्रिय में १०, तिर्यंच पञ्चेन्द्रिय में १३ और मनुष्य में १४ बोल पाये जाते हैं, समुच्चय जीव की तरह कह देना चाहिए किन्तु नियमा ६ दिशा का कहना चाहिए।

सेवं भंते! सेवं भंते!!

थोकड़ा नं० १७२

श्री भगवतीजी सूत्र के २५ वें शतक के तीसरे उद्देशे में छह संस्थान का थोकड़ा चलता है सो कहते हैं—

१—अहो भगवन्! संस्थान (पुद्गल स्कन्ध का आकार) कितने प्रकार का है? हे गौतम! संस्थान छह प्रकार का है—

१—परिमण्डल (गोल—चूड़ी के आकार)।

२—वट्ट—वृत्त (गोल—लड्डू के आकार)।

३—तंस—त्र्यस्र (त्रिकोण—सिंघाड़े के आकार)।

४—चउरंस—चतुरस्र (चतुष्कोण—चौकी के आकार)।

५—आयत (लम्बा—लकड़ी के आकार)।

६—अनित्थंस्थ—(उपरोक्त पांच संस्थानों से भिन्न)।

२—अहो भगवन्! द्रव्य की अपेक्षा से परिमण्डल संस्थान क्या संख्यात हैं या असंख्यात हैं या अनन्त हैं? हे गौतम! संख्यात नहीं, असंख्यात नहीं किंतु अनन्त हैं। जिस तरह

रिमण्डल संस्थान का कहा उसी तरह बाकी पांच संस्थान का कहना चाहिये। जिस तरह द्रव्य की अपेक्षा से कहा उसी तरह देश की अपेक्षा से और द्रव्य प्रदेश भेला की अपेक्षा से कहना चाहिए।

द्रव्य की अपेक्षा से इनकी अल्पबहुत्व—

१—*सबसे थोड़ा परिमण्डल संस्थान द्रव्य की अपेक्षा।
२—उससे वट्ट (वृत्त) संस्थान द्रव्य की अपेक्षा संख्यातगुणा है।
३—उससे चउरंस (चतुरस्र) संस्थान द्रव्य की अपेक्षा संख्यातगुणा है।
४—उससे तंस (त्र्यस्र) संस्थान द्रव्य की अपेक्षा संख्यातगुणा है।
५—उससे आयत संस्थान द्रव्य की अपेक्षा संख्यातगुणा है।
६—उससे अनित्थंस्थ संस्थान द्रव्य की अपेक्षा असंख्यातगुणा है।

जिस तरह द्रव्य की अपेक्षा से अल्पबहुत्व कही उसी तरह प्रदेश की अपेक्षा से भी कह देनी चाहिए।

---

*यहां संस्थानों की जघन्य अवगाहना का विचार किया गया है। जो संस्थान जिस संस्थान की अपेक्षा बहुप्रदेशावगाही है वह स्वाभाविक रीति से थोड़ा है। परिमण्डल संस्थान जघन्य से बीस प्रदेशों की अवगाहना वाला होता है। वट्ट (वृत्त) संस्थान जघन्य से पांच प्रदेशावगाही है। चउरंस (चतुरस्र) संस्थान चार प्रदेशावगाही, तंस (त्र्यस्र) संस्थान तीन प्रदेशावगाही, और आयत संस्थान जघन्य से दो प्रदेशावगाही है। इसलिए परिमण्डल संस्थान बहु प्रदेशावगाही होने से सबसे थोड़ा है। उससे वट्टादि (वृत्त आदि) संस्थान अल्प अल्प प्रदेशावगाही होने से एक दूसरे से संख्यातगुणा अधिक अधिक हैं।

द्रव्य प्रदेश दोनों की भेली अल्पबहुत्व १—सबसे थोड़े परिमण्डल संस्थान द्रव्य की अपेक्षा। २—उससे वृत्त संस्थान द्रव्य की अपेक्षा संख्यात गुणा। ३—उससे चउरंस संस्थान द्रव्य की अपेक्षा संख्यातगुणा। ४—उससे त्र्यस्र संस्थान द्रव्य की अपेक्षा संख्यातगुणा। ५—उससे आयत संस्थान द्रव्य की अपेक्षा संख्यात गुणा। ६—उससे अनित्थंस्थ संस्थान द्रव्य की अपेक्षा असंख्यात गुणा। ७—उससे परिमण्डल संस्थान प्रदेश की अपेक्षा असंख्यातगुणा। ८—उससे वृत्त संस्थान प्रदेश की अपेक्षा संख्यात गुणा। ९—उससे चउरंस संस्थान प्रदेश की अपेक्षा संख्यात गुणा। १०—उससे तंस (त्र्यस्र) संस्थान प्रदेश की अपेक्षा संख्यात गुणा। ११—उससे आयत संस्थान प्रदेश की अपेक्षा संख्यात गुणा। १२—उससे अनित्थंस्थ संस्थान प्रदेश की अपेक्षा असंख्यात गुणा है।

इनके कुल ४२ अलावे (६+६+६+६+६+६+६=४२) हैं।

सेवं भंते! सेवं भंते!!

थोकड़ा नं० १७२

श्री भगवतीजी सूत्र के २५ वें शतक के तीसरे उद्देशे में पांच संस्थान का थोकड़ा चलता है सो कहते हैं—

१—अहो भगवन्! संस्थान कितने प्रकार के हैं? हे गौतम! संस्थान पांच प्रकार के हैं—परिमण्डल, वृत्त (वट्ट), त्र्यस्र (तंस), चतुरस्र (चउरंस) आयत*।

*इसमें संस्थानों की सामान्य प्ररूपणा की गई है। अब रत्नप्रभा आदि

२-अहो भगवान् ! परिमण्डल संस्थान क्या संख्यात हैं, ? या असंख्यात हैं ? या अनन्त हैं ? हे गौतम ! संख्यात नहीं, असंख्यात नहीं, अनन्त हैं। इसी प्रकार वृत्त, त्र्यस्र, चतुरस्र और आयत सभी संस्थान अनन्त अनन्त हैं।

३-अहो भगवान् ! रत्नप्रभा नारकी में परिमण्डल संस्थान क्या संख्यात हैं, या असंख्यात हैं, या अनन्त हैं ? हे गौतम ! संख्यात नहीं, असंख्यात नहीं, अनन्त हैं। इसी तरह आयत संस्थान तक कह देना चाहिये। इसी तरह ७ नारकी, १२ देवलोक, ९ ग्रैवेयक, ५ अनुत्तर विमान, १ सिद्ध-शिला, १ समुच्चय इन ३५ बोलों में पांच संस्थानों का कह देना चाहिए। इसके कुल भांगे १७५ हुए (३५ × ५=१७५)।

४-अहो भगवान् ! जहाँ एक* जवमध्य परिमण्डल

में संस्थानों की प्ररूपणा करने की इच्छा से फिर संस्थान के विषय में प्रश्न किया गया है। यहाँ दूसरे संस्थान संयोग जन्य होने से अनित्थंस्थ संस्थान की विवक्षा नहीं की गई है। इसलिये यहाँ पांच ही संस्थान कहे गये हैं।

* परिमण्डल संस्थान वाले पुद्गल स्कन्धों से यह सारा लोक ठसाठस भरा हुआ है। उनमें से तुल्य प्रदेशवाले, तुल्य प्रदेशावगाही (तुल्य आकाश प्रदेशों में रहने वाले) और तुल्य वर्णादि पर्याय वाले जो जो परिमण्डल द्रव्य हैं, उन सबको कल्पना से एक पंक्ति में स्थापित किया जाय और उसके ऊपर और नीचे एक एक जाति वाले परिमण्डल द्रव्यों को एक एक पंक्ति में स्थापित किया जाय। इससे उनमें अल्प बहुत्व होने से परिमण्डल संस्थान का समुदाय जवमध्य के आकार वाला होता है। उसमें जघन्य प्रदेशिक द्रव्य स्वभाव से ही अल्प

संस्थान होता है वहाँ दूसरे परिमण्डल संस्थान कितने होते हैं ? हे गौतम ! अनन्त होते हैं। इसी तरह वृत्त, त्र्यस्र, चतुरस्र और आयत संस्थान भी अनन्त अनन्त होते हैं।

जिस तरह एक जवमध्य परिमण्डल संस्थान का कहा है उसी तरह बाकी चार संस्थानों का कह देना चाहिए। ५X५=२५ हुए। २५ को ३५ से गुणा करने से ८७५ भांगे हुए। इनमें १७५ भांगे मिला देने से कुल १०५० भांगे हुए।

सेवं भंते ! सेवं भंते !!

थोकड़ा नं० १७४

श्री भगवती सूत्र के २५ वें शतक के तीसरे उद्देशे में संस्थान के २० बोलों का थोकड़ा चलता है सो कहते हैं—

१-अहो भगवान् ! परिमण्डल संस्थान के कितने भेद हैं ? हे गौतम ! परिमण्डल संस्थान के दो भेद हैं—घन परिमण्डल और प्रतर परिमण्डल। घन परिमंडल जघन्य ४०

होने से पहली पंक्ति छोटी होती है। उससे आगेकी पंक्तियाँ अधि[illegible] और अधिकतर प्रदेश वाली होने से उससे मोटी और अधिक मो[illegible] होती जाती हैं। उसके बाद क्रमशः घटते हुए अन्तमें उत्कृष्ट प्रदेश वा[illegible] द्रव्य आयन्त अल्प होने से अन्तिम पंक्ति अत्यन्त छोटी होती है। इ[illegible] प्रकार तुल्य प्रदेश वाले और दूसरे परिमण्डल द्रव्यों से जवमध्य (ज[illegible] के मध्य आकारवाला) सेव बनता है।

जहाँ एक जवमध्य परिमण्डल संस्थान होता है वहाँ दूस[illegible] परिमण्डल संस्थान कितने होते हैं ? यह प्रश्न किया गया है। जिस[illegible] उत्तर दिया गया है कि दूसरे परिमण्डल संस्थान अनन्त होते हैं

१ आदि संस्थानों के लिए भी जान लेना चाहिए।

प्रदेशी स्कन्ध होता है और ४० आकाश प्रदेशों को अवगाहता है। उत्कृष्ट अनन्त प्रदेशी होता है और असंख्यात आकाश प्रदेशों को अवगाहता है। प्रतर परिमण्डल जघन्य २० प्रदेशी होता है और २० आकाश प्रदेशों को अवगाहता है। उत्कृष्ट अनन्त प्रदेशी होता है और असंख्यात आकाश प्रदेशों को अवगाहता है।

२–अहो भगवान्! वृत्त (वट्ट) संस्थान के कितने भेद हैं? हे गौतम! दो भेद हैं– ÷घनवृत्त और प्रतर वृत्त। प्रतर वृत्त के दो भेद–*ओज प्रदेशी और युग्म प्रदेशी। ओज प्रदेशी जघन्य ५ प्रदेशी होता है और ५ आकाश प्रदेशों को अवगाहता है। उत्कृष्ट अनंत प्रदेशी होता है और असंख्यात आकाश प्रदेशोंको अवगाहता है। युग्म प्रदेशी जघन्य १२ प्रदेशी होता है और १२ आकाश प्रदेशों को अवगाहता है। उत्कृष्ट अनन्त प्रदेशी होता है और असंख्यात आकाश प्रदेशों को अवगाहता है।

घनवृत्तके दो भेद–ओजप्रदेशी और युग्म प्रदेशी। ओजप्रदेशी जघन्य७ प्रदेशी होता है और ७ आकाशप्रदेशोंको अवगाहता है। उत्कृष्ट अनन्त प्रदेशी होता है और असंख्यात आकाश प्रदेशों को अवगाहता है। युग्म प्रदेशी जघन्य ३२ प्रदेशी होता है

÷जो गेंद की तरह सब तरफ समप्रमाण हो वह घनवृत्त है और मांडे की तरह सिर्फ मोटेपन (जाडापन) में कम हो वह प्रतर वृत्त है।

* एकी संख्या वाले को ओज प्रदेशी कहते हैं। जैसे–१, ३, ५, ७ इत्यादि।

दो की संख्या वाले को युग्म प्रदेशी कहते हैं। जैसे–२, ४, ६, ८ इत्यादि।

और ३२ आकाश प्रदेशों को अवगाहता है। उत्कृष्ट अनन्त प्रदेशी होता है और असंख्यात आकाश प्रदेशों को अवगाहता है।

३–अहो भगवान्! तंस (त्र्यस्र) संस्थान के कितने भेद हैं? हे गौतम! दो भेद हैं–घन और प्रतर। घन के दो भेद–ओज प्रदेशी और युग्म प्रदेशी। ओज प्रदेशी जघन्य ३५ प्रदेशी होता है और ३५ आकाश प्रदेशों को अवगाहता है। उत्कृष्ट अनन्त प्रदेशी होता है और असंख्यात आकाश प्रदेशों को अवगाहता है। युग्म प्रदेशी जघन्य ४ प्रदेशी होता है और ४ आकाश प्रदेशों को अवगाहता है। उत्कृष्ट अनन्त प्रदेशी होता है और असंख्यात आकाश प्रदेशों को अवगाहता है।

प्रतर तंस के दो भेद–ओज प्रदेशी और युग्म प्रदेशी। ओज प्रदेशी जघन्य ३ प्रदेशी होता है और ३ आकाश प्रदेशों को अवगाहता है। उत्कृष्ट अनन्त प्रदेशी होता है और असंख्यात आकाश प्रदेशों को अवगाहता है। युग्म प्रदेशी तंस जघन्य ६ प्रदेशी होता है और जघन्य ६ आकाश प्रदेशों को अवगाहता है। उत्कृष्ट अनन्तप्रदेशी होता है और असंख्यात आकाश प्रदेशों को अवगाहता है।

४–अहो भगवान्! चतुरस्र (चौरस) संस्थान के कितने भेद हैं? हे गौतम! दो भेद हैं–घन और प्रतर। घन के दो भेद–ओज प्रदेशी और युग्म प्रदेशी। ओज प्रदेशी जघन्य २७ प्रदेशी होता है और २७ आकाश प्रदेशों को अवगाहता है

उत्कृष्ट अनन्त प्रदेशी होता है और असंख्यात आकाशप्रदेशों को अवगाहता है। युग्म प्रदेशी जघन्य ८ प्रदेशी होता है और ८ आकाश प्रदेशों को अवगाहता है। उत्कृष्ट अनन्तप्रदेशी होता है और असंख्यात आकाशप्रदेशों को अवगाहता है।

प्रतर चोरस के दो भेद-ओज प्रदेशी और युग्म प्रदेशी। ओजप्रदेशी जघन्य ९ प्रदेशी होता है और ९ आकाश प्रदेशों को अवगाहता है। उत्कृष्ट अनन्त प्रदेशी होता है और असंख्यात आकाश प्रदेशों को अवगाहता है। युग्म प्रदेशी प्रतर चोरस जघन्य ४ प्रदेशी होता है और ४ आकाश प्रदेशों को अवगाहता है। उत्कृष्ट अनन्त प्रदेशी होता है और असंख्यात आकाश प्रदेशों को अवगाहता है।

५-अहो भगवान्! आयत संस्थान के कितने भेद हैं? हे गौतम! तीन प्रकार का है-१ श्रेणि आयत, २ प्रतर आयत, ३ घन आयत। श्रेणि आयत के दो भेद-ओज प्रदेशी और युग्म प्रदेशी। ओज प्रदेशी जघन्य ३ प्रदेशी होता है और ३ आकाश प्रदेशों को अवगाहता है। उत्कृष्ट अनन्त प्रदेशी होता है और असंख्यात आकाश प्रदेशों को अवगाहता है। युग्म प्रदेशी जघन्य २ प्रदेशी होता है और २ आकाश देशों को अवगाहता है। उत्कृष्ट अनन्त प्रदेशी होता है और असंख्यात आकाश प्रदेशों को अवगाहता है।

प्रतर आयत के दो भेद-ओजप्रदेशी और युग्म प्रदेशी। ओजप्रदेशी जघन्य १५ प्रदेशी होता है और १५ आकाश

प्रदेशों को अवगाहता है। उत्कृष्ट अनन्त प्रदेशी होता है और असंख्यात आकाश प्रदेशों को अवगाहता है। युग्म प्रदेशी जघन्य ६ प्रदेशी होता है और ६ आकाश प्रदेशों को अवगाहता है। उत्कृष्ट अनन्त प्रदेशी होता है और असंख्यात आकाश प्रदेशों को अवगाहता है।

घन आयत के दो भेद—ओज प्रदेशी और युग्म प्रदेशी। ओज प्रदेशी जघन्य ४५ प्रदेशी होता है और ४५ आकाश प्रदेशों को अवगाहता है। उत्कृष्ट अनन्त प्रदेशी होता है और असंख्यात आकाश प्रदेशों को अवगाहता है। युग्म प्रदेशी जघन्य १२ प्रदेशी होता है और १२ आकाश प्रदेशों को अवगाहता है। उत्कृष्ट अनन्त प्रदेशी होता है और असंख्यात आकाश प्रदेशों को अवगाहता है।

नोट—संस्थान के जघन्य भेदों के आकार पुस्तक के अन्त में परिशिष्ट में दिये गये हैं।

सेवं भंते ! सेवं भंते !!

थोकड़ा नं० १७५

श्री भगवतीजी सूत्र के २५ वें शतक के तीसरे उद्देशे में संस्थान के कडजुम्मा (कृतयुग्म) का थोकड़ा चलता है सो कहते हैं—

१—अहो भगवान् ! एक परिमण्डल संस्थान द्रव्य की अपेक्षा क्या* कडजुम्मा (कृतयुग्म) है, तेओगा (त्र्योज)

---

* परिमण्डल संस्थान द्रव्य रूप से एक है। एक वस्तु का चार चार से अपहार (भाग) नहीं होता है। इसलिये एक ही बाकी रहता है,

परिशिष्ट

संस्थान के जघन्य भेदों के आकार नीचे लिखे अनुसार हैं।
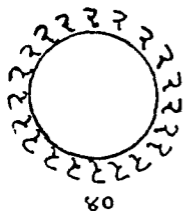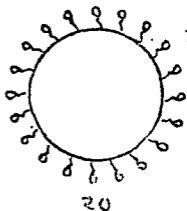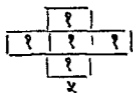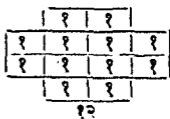
ओज प्रदेशी प्रतर वृत्त संस्थान

	१	
१	१	१
	१	

५

युग्म प्रदेशी प्रतर वृत्त संस्थान

	१	१	
१	१	१	१
१	१	१	१
	१	१	

१२

ओज प्रदेशी घन वृत्त संस्थान

	१	
१	३	१
	१	

७

युग्म प्रदेशी घन वृत्त संस्थान

	२	२	
२	४	४	२
२	४	४	२
	२	२	

३२

घन त्र्यंस्र संस्थान ओज प्रदेशी

५	४	३	२	१
४	३	२	१	
३	२	१		
२	१			
१				

३५

घन त्र्यंस्र संस्थान युग्म प्रदे

४

प्रतर त्र्यंस्र संस्थान ओज प्रदेशी

३

प्रतर त्र्यंस्र संस्थान युग्म प्रदे

६
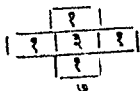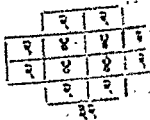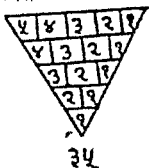
घन चतुरस्त्र संस्थान ओज प्रदेशी

३	३	३
३	३	३
३	३	३

२७

घन चतुरस्त्र संस्थान युग्म प्रदेशी

२	२
२	२

८

प्रतर चतुरस्त्र संस्थान ओज प्रदेशी

१	१	१
१	१	१
१	१	१

९

प्रतर चतुरस्त्र संस्थान युग्म प्रदेशी

१	१
१	१

४

श्रेणी आयत संस्थान ओज प्रदेशी

~	~	~

३

श्रेणी आयत संस्थान युग्म प्रदेशी

~	~

२

प्रतर आयत संस्थान ओज प्रदेशी

१५

प्रतर आयत संस्थान युग्म प्रदेशी

६

घन आयत संस्थान ओज प्रदेशी

४५

घन आयत संस्थान युग्म प्रदेशी

१२

★

है, दावरजुम्मा (द्वापर युग्म) है या कलिओग (कल्योज) हैं ? हे गौतम ! वह कडजुम्मा, तेओगा, दावरजुम्मा नहीं होता है किन्तु कलिओग (कल्योज) होता है। इसीप्रकार वृत्त आदि चारों संस्थानों का जान लेना चाहिए।

२—अहो भगवान् ! बहुत परिमण्डल संस्थान द्रव्य रूप से क्या कड़जुम्मा हैं, तेओगा हैं, दावरजुम्मा हैं या कलिओगा हैं ? हे गौतम ! ओघादेश से (सब समुदाय रूप से) सिय (कदाचित्) कडजुम्मा है सिय तेओगा है, सिय दावर जुम्मा है और सिय कलिओगा है। विहाणादेस (विधानादेश—एक) से कडजुम्मा नहीं, तेओगा नहीं, दावरजुम्मा नहीं किन्तु कलिओगा है। इसी तरह वृत्त आदि चारों संस्थान कह देने चाहिए।

अतः वह कल्योजरूप है। इसी तरह वृत्त आदि संस्थानों के लिए भी जान लेना चाहिए।

जब बहुवचन आश्री परिमण्डल संस्थान का विचार किया जाय तब उनमें चार चार का अपहार करते हुए (चार चार का भाग देते हुए) किसी समय कुछ भी बाकी नहीं बचता तब वह कदाचित् कृतयुग्म होता है। कभी तीन बाकी बचते हैं तब वह कदाचित् तेओगा (त्र्योज) होता है। कभी दो बाकी बचते हैं तब वह कदाचित् दावरजुम्मा (द्वापर-युग्म) होता है और कभी एक ही बाकी बचता है तब वह कदाचित् कल्योज रूप होता है। जब विशेष दृष्टि से एक एक संस्थान का विचार किया जाता है तब चार का अपहार न होने से एक ही बाकी रहता है, इसलिए कल्योजरूप होता है।

३–अहो भगवान् ! एक परिमण्डल संस्थान प्रदेश की अपेक्षा क्या कडजुम्मा है, यावत् कलिओगा है ? हे गौतम ! सिय कडजुम्मा सिय तेओगा सिय दावरजुम्मा सिय कलिओगा है। इसीतरह एक वचन की अपेक्षा बाकी वृत्त आदि चारों संस्थानों का कह देना चाहिए। बहुवचन की अपेक्षा दो भेद हैं–ओघादेश और विहाणादेस। ओघादेश से सिय कडजुम्मा, सिय तेओगा, सिय दावरजुम्मा, सिय कलिओगा है। विहाणादेश में कडजुम्मा भी होते हैं, तेओगा भी होते हैं, दावरजुम्मा भी होते हैं और कलिओगा भी होते हैं। इसी तरह वृत्त आदि चारों संस्थान कह देना चाहिये।

४–अहो भगवान् ! एक परिमण्डल संस्थान ने क्षेत्र की अपेक्षा क्या कडजुम्मा प्रदेश अवगाहे हैं यावत् कलिओगा प्रदेश अवगाहे हैं ? हे गौतम ! कडजुम्मा प्रदेशों को अवगाहे हैं किन्तु तेओगा, दावरजुम्मा और कलिओगा प्रदेशों को नहीं अवगाहे हैं।

५—अहो भगवान् ! एक वृत्त संस्थान ने क्षेत्र की अपेक्षा क्या कडजुम्मा प्रदेश अवगाहे हैं यावत् कलिओगा प्रदेश अवगाहे हैं ? हे गौतम ! सिय कडजुम्मा, सिय तेओगा, सिय कलिओगा प्रदेशों को अवगाहे हैं किन्तु दावरजुम्मा प्रदेशों को नहीं अवगाहे हैं।

६—अहो भगवान् ! एक त्र्यस्र संस्थान ने क्षेत्र की अपेक्षा क्या कडजुम्मा प्रदेश अवगाहे हैं यावत् कलिओगा

गाहे हैं ? हे गौतम ! सिय कडजुम्मा, सिय तेओगा, सिय दावर-जुम्मा प्रदेशों को अवगाहे हैं किन्तु कलिओगा प्रदेशों को नहीं अवगाहे हैं ।

७—अहो भगवान् ! एक चौरस संस्थान ने क्षेत्र की अपेक्षा क्या कडजुम्मा यावत् कलियोगा प्रदेश अवगाहे हैं ? हे गौतम ! जैसे वृत्त संस्थान का कहा उसी प्रकार चौरस संस्थान का भी कह देना चाहिए ।

८—अहो भगवान् ! एक आयत संस्थान ने क्षेत्र की अपेक्षा क्या कडजुम्मा यावत् कलियोगा प्रदेश अवगाहे हैं ? हे गौतम ! सिय कडजुम्मा यावत् सिय कलियोगा प्रदेश अवगाहे हैं ।

९—अहो भगवान् ! बहुत परिमण्डल संस्थानों ने क्षेत्र की अपेक्षा क्या कडजुम्मा यावत् कलियोगा आकाश प्रदेश अवगाहे हैं ? हे गौतम ! इसके दो भेद हैं—ओघादेश और विहाणादेश । ओघादेश की अपेक्षा कडजुम्मा आकाशप्रदेश अवगाहे हैं, बाकी तीन नहीं अवगाहे हैं । विहाणादेश की अपेक्षा बहुत कडजुम्मा आकाश प्रदेश अवगाहे हैं, शेष तीन नहीं अवगाहे हैं ।

इसी प्रकार वृत्त संस्थान के भी दो भेद हैं—ओघादेश और विहाणादेश । ओघादेश से कडजुम्मा प्रदेश अवगाहे हैं, शेष तीन नहीं अवगाहे हैं । विहाणादेशकी अपेक्षा कडजुम्मा प्रदेश भी, तेओगा प्रदेश भी, कलियोगा प्रदेश भी अवगाहे हैं,

दावरजुम्मा प्रदेश नहीं अवगाहे हैं।

वंस संस्थान के भी दो भेद हैं—ओघादेश और विहाणादेश। ओघादेश की अपेक्षा कडजुम्मा प्रदेश अवगाहे हैं, शेष तीन नहीं अवगाहे हैं। विहाणादेश की अपेक्षा कडजुम्मा प्रदेश भी, तेओगा प्रदेश भी दावरजुम्मा प्रदेश भी अवगाहे हैं किन्तु कलियोगा नहीं अवगाहे हैं। इसी प्रकार चौरस संस्थान का भी कह देना चाहिये। आयत संस्थान के दो भेद हैं—ओघादेश और विहाणादेश। ओघादेश की अपेक्षा कडजुम्मा प्रदेश अवगाहे हैं, शेष तीन नहीं अवगाहे हैं। विहाणादेश की अपेक्षा कडजुम्मा प्रदेश भी, तेओगा प्रदेश भी, दावरजुम्मा प्रदेश भी और कलियोगा प्रदेश भी अवगाहे हैं।

१०—अहो भगवान्! एक वचन की अपेक्षा परिमण्डल संस्थान क्या कडजुम्मा समय की स्थिति वाला है? तेओगा समय की स्थिति वाला है? दावरजुम्मा समय की स्थिति वाला है? कलियोगा समय की स्थिति वाला है? हे गौतम! सिय कडजुम्मा समय की स्थिति वाला है यावत् सिय कलियोगा समय की स्थिति वाला है। इसी तरह वृत्त आदि चार संस्थान का भी कह देना चाहिए।

११—अहो भगवान्! बहुवचन की अपेक्षा परिमण्डल संस्थान क्या कडजुम्मा [illegible] स्थिति [illegible]? या

ओघादेश की अपेक्षा सिय कडजुम्मा समय की स्थिति के हैं यावत् सिय कलियोगा समय की स्थिति के हैं। विहाणादेश की अपेक्षा भी कडजुम्मा समय की स्थिति वाले हैं यावत् कलियोगा समय की स्थिति वाले हैं। इसी तरह वृत्त आदि चारों संस्थानों का भी कह देना चाहिए।

१२–अहो भगवान् ! एक वचन से परिमण्डल संस्थान काला वर्ण की पर्यायों की अपेक्षा क्या कडजुम्मा है यावत् कलियोगा है ? हे गौतम ! सिय कडजुम्मा है यावत् सिय कलियोगा है। जिस तरह स्थिति का कहा उसी प्रकार कह देना चाहिए। इसी प्रकार बीस वर्णादिक (५ वर्ण, २ गन्ध, ५ रस, ८ स्पर्श=२०) का कह देना चाहिए। बहुवचन से परिमण्डल संस्थान के काला वर्ण की अपेक्षा दो भेद हैं–ओघादेश और विहाणादेश। ओघादेश की अपेक्षा सिय कडजुम्मा यावत् सिय कलियोगा है।—विहाणादेश की अपेक्षा कडजुम्मा भी है यावत् कलियोगा भी है। इसी तरह वर्णादि २० बोलों का कह देना चाहिए।

सेवं भंते ! सेवं भंते !!

थोकड़ा नं० १७६

श्री भगवतीजी सूत्र के २५ वें शतक के तीसरे उद्देशे में आकाश प्रदेशों की श्रेणी का थोकड़ा चलता है सो कहते हैं—

१–अहो भगवान् ! आकाश प्रदेश की श्रेणियां द्रव्य की अपेक्षा क्या संख्यात असंख्यात या अनन्त हैं ? हे गौतम !

दावरजुम्मा प्रदेश नहीं अवगाहे हैं।

तंस संस्थान के भी दो भेद हैं-ओघादेश और विहाणादेश। ओघादेश की अपेक्षा कडजुम्मा प्रदेश अवगाहे हैं, शेष तीन नहीं अवगाहे हैं। विहाणादेश की अपेक्षा कडजुम्मा प्रदेश भी, तेओगा प्रदेश भी दावरजुम्मा प्रदेश भी अवगाहे हैं। किन्तु कलियोगा नहीं अवगाहे हैं। इसी प्रकार चौरस संस्थान का भी कह देना चाहिये। आयत संस्थान के दो भेद हैं-ओघादेश और विहाणादेश। ओघादेश की अपेक्षा कडजुम्मा प्रदेश अवगाहे हैं, शेष तीन नहीं अवगाहे हैं। विहाणादेश की अपेक्षा कडजुम्मा प्रदेश भी, तेओगा प्रदेश भी, दावरजुम्मा प्रदेश भी और कलियोगा प्रदेश भी अवगाहे हैं।

१०-अहो भगवान्! एक वचन की अपेक्षा परिमण्डल संस्थान क्या कडजुम्मा समय की स्थिति वाला है? तेओ समय की स्थिति वाला है? दावरजुम्मा समय की स्थि वाला है? कलियोगा समय की स्थिति वाला है? हे गौत सिय कडजुम्मा समय की स्थिति वाला है यावत् सिय क योगा समय की स्थिति वाला है। इसी तरह वृत्त आदि च चार संस्थान का भी कह देना चाहिए।

११-अहो भगवान्! बहुवचन की अपेक्षा परिमण संस्थान क्या कडजुम्मा समय की स्थिति वाले हैं? य कलियोगा समय की स्थिति वाले हैं? हे गौतम बहु वचन प गण्डल संस्थान के दो भेद हैं-ओघादेश और विहाणादे

ओघादेश की अपेक्षा सिय कडजुम्मा समय की स्थिति के हैं यावत् सिय कलियोगा समय की स्थिति के हैं। विहाणादेश की अपेक्षा भी कडजुम्मा समय की स्थिति वाले हैं यावत् कलियोगा समय की स्थिति वाले हैं। इसी तरह वृत्त आदि चारों संस्थानों का भी कह देना चाहिए।

१२-अहो भगवान्! एक वचन से परिमण्डल संस्थान काला वर्ण की पर्यायों की अपेक्षा क्या कडजुम्मा है यावत् कलियोगा है? हे गौतम! सिय कडजुम्मा है यावत् सिय कलियोगा है। जिस तरह स्थिति का कहा उसी प्रकार कह देना चाहिए। इसी प्रकार बीस वर्णादिक (५ वर्ण, २ गन्ध, ५ रस, ८ स्पर्श=२०) का कह देना चाहिए। बहुवचन से परिमण्डल संस्थान के काला वर्ण की अपेक्षा दो भेद हैं-ओघादेश और विहाणादेश। ओघादेश की अपेक्षा सिय कडजुम्मा यावत् सिय कलियोगा है।—विहाणादेश की अपेक्षा कडजुम्मा भी है यावत् कलियोगा भी है। इसी तरह वर्णादि २० बोलों का कह देना चाहिए।

सेवं भंते! सेवं भंते!!

थोकड़ा नं० १७६

श्री भगवतीजी सूत्र के २५ वें शतक के तीसरे उद्देशे में आकाश प्रदेशों की श्रेणी का थोकड़ा चलता है सो कहते हैं—

१-अहो भगवान्! आकाश प्रदेश की श्रेणियां द्रव्य की अपेक्षा क्या संख्यात असंख्यात या अनन्त हैं? हे गौतम!

संख्यात नहीं, असंख्यात नहीं किन्तु अनन्त हैं। इसी तरह पूर्व, पश्चिम, उत्तर, दक्षिण, ऊंची नीची छहों दिशाओं का कह देना चाहिए।

२—अहो भगवान्! लोकाकाश की श्रेणियां द्रव्य की अपेक्षा क्या संख्यात, असंख्यात या अनन्त हैं? हे गौतम असंख्यात हैं। इसी तरह छहों दिशा की लोकाकाश श्रेणी का देना चाहिए।

३—अहो भगवान्! अलोकाकाश की श्रेणियां द्रव्य से अपेक्षा क्या संख्यात, असंख्यात या अनन्त हैं? हे गौतम अनन्त हैं। संख्यात असंख्यात नहीं हैं। इसी तरह छहों दिशा का कह देना चाहिए।

४—अहो भगवान्! आकाश प्रदेश की श्रेणियां प्रदेश से अपेक्षा क्या संख्यात, असंख्यात, या अनन्त हैं? हे गौतम अनन्त हैं। इसी तरह छहों दिशा का कह देना चाहिए।

५—अहो भगवान्! लोकाकाश की श्रेणियां प्रदेश से अपेक्षा क्या संख्यात असंख्यात या अनन्त हैं? हे गौतम!* सिय संख्यात, सिय असंख्यात हैं किन्तु अनन्त नहीं हैं। इसी

---

* लोकाकाश की श्रेणियाँ प्रदेश की अपेक्षा पूर्व पश्चिम उत्तर दक्षिण संख्यात किस तरह होती हैं? इस विषय में चूर्णिकार और प्राचीन टीकाकार इस प्रकार समाधान करते हैं—चूर्णिकार कहते हैं कि—लोक के वृत्ताकार (गोल) दन्तक जो अलोक में गये हैं उनकी श्रेणियाँ संख्यात प्रदेशरूप हैं और बाकी श्रेणियाँ असंख्यात प्रदेश रूप हैं। प्राचीन टीकाकार कहते हैं कि—लोकाकाश वृत्ताकार (गोल)

तरह पूर्व पश्चिम उत्तर दक्षिण चारों दिशाओं का कह देना चाहिए। ऊंची दिशा और नीची दिशा की श्रेणियाँ संख्यात× नहीं हैं, असंख्यात हैं और अनन्त नहीं हैं।

६–अहो भगवान्! अलोकाकाश की श्रेणियाँ प्रदेश की अपेक्षा क्या संख्यात, असंख्यात या अनन्त हैं? हे गौतम! सिय संख्यात, सिय असंख्यात, सिय अनन्त हैं। इसी तरह ऊंची दिशा और नीची दिशा का भी कह देना चाहिए। पूर्व पश्चिम उत्तर दक्षिण दिशा में श्रेणियाँ संख्यात नहीं, असंख्यात नहीं किन्तु अनन्त हैं।

७–अहो भगवान्! क्या श्रेणियाँ सादि सान्त हैं? या सादि अनन्त हैं? या अनादि सान्त हैं? या अनादि अनन्त हैं? हे गौतम! श्रेणियाँ अनादि अनन्त हैं। इसी तरह छहों दिशा की कह देना चाहिए। लोक की श्रेणियों में एक भांगा पाया जाता है—सादि सान्त। इसी तरह छहों दिशा का कह देना चाहिए। अलोकाकाश की श्रेणियों में चारों भांगे पाये

होने से पर्यन्तवर्ती (अन्त में रहने वाली) श्रेणियाँ संख्यात प्रदेश रूप हैं।

× ऊर्ध्वलोक से अधोलोक तक लोकाकाश की लम्बी श्रेणी असंख्यात प्रदेश की है किन्तु संख्यात प्रदेश की या अनन्त प्रदेश की नहीं है। इस सूत्र के कथन से यह भी ज्ञात होता है कि अधोलोक के कोने से ब्रह्म देवलोक के तिरछे प्रान्त भाग तक जो श्रेणी निकली है वह भी असंख्यात प्रदेश की ही है किन्तु संख्यात प्रदेश की या अनन्त प्रदेश की नहीं है।

१०—अहो भगवान् ! परमाणु आदि की अनुश्रेणि (श्रेणी के अनुसार) गति होती है या विश्रेणि (श्रेणी के प्रतिकूल) गति होती है ? हे गौतम ! अनुश्रेणि गति होती है, विश्रेणि गति नहीं होती। परमाणु से लेकर अनन्त प्रदेशी स्कन्ध तक अजीव सम्बन्धी १३ बोल और २४ दण्डक, इन ३७ बोलों की अनुश्रेणि गति होती है किन्तु विश्रेणि गति नहीं होती है।

सेवं भंते ! सेवं भंते !!

(थोकड़ा नं० १७७)

श्री भगवतीजी सूत्र के २५ वें शतक के चौथे उद्देशे में द्र० का थोकड़ा चलता है सो कहते हैं—

१—अहो भगवान् ! जुम्मा (युग्म) कितने प्रकारके हैं हे गौतम ! चार प्रकार के हैं— कडजुम्मा, दावरजुम्मा, तेओगा, कलियोगा ×। समुच्चय जीव, नारकी आदि २४ दण्डक और

६—चक्रवाल-परमाणु आदि जिस श्रेणी द्वारा गोल घूमकर उत्पन्न होते हैं उसे चक्रवाल कहते हैं।

७—अर्द्ध चक्रवाल परमाणु आदि जिस श्रेणी द्वारा आधे गोल घूमकर उत्पन्न होते हैं उसे अर्द्ध चक्रवाल कहते हैं।

श्रेणियों का आकार इस प्रकार बतलाया गया है:—

ऋजु—, एकतो वक्रा Λ, उभयतोवक्रा M, एकतःखा L उभयतोखा ⅃, चक्रवाल O, अर्धचक्रवाल⌒।

× १८ वें शतक के चौथे उद्देशे में चार जुम्मा का थोकड़ा कहा गया है उसके अनुसार यहाँ भी कह देना चाहिए। द्रव्य, क्षेत्र, काल, भाव इन चार में जितने जितने जुम्मा पाये जायँ उतने उतने कह देने चाहिए। (देखो भगवती सूत्र के थोकड़ों का छठा भाग पृष्ठ १६)।

सिद्ध भगवान् में चार चार जुम्मा पाये जाते हैं।

२—अहो भगवान्! द्रव्य कितने प्रकार के हैं? हे गौतम! छह प्रकार के हैं—१ धर्मास्तिकाय २ अधर्मास्तिकाय, ३–आकाशास्तिकाय, ४–जीवास्तिकाय, ५–पुद्गलास्तिकाय, ६–काल।

३—अहो भगवान्! धर्मास्तिकाय द्रव्य की अपेक्षा क्या कडजुम्मा है यावत् कलियोगा है? हे गौतम! कलियोगा है। शेष तीन नहीं इसी तरह अधर्मास्तिकाय और आकाशास्तिकाय कह देनी चाहिए।

४—अहो भगवान्! जीवास्तिकाय द्रव्य की अपेक्षा क्या कडजुम्मा है यावत् कलियोगा है? हे गौतम! कडजुम्मा है शेष तीन नहीं।

५—अहो भगवान्! पुद्गलास्तिकाय द्रव्य की अपेक्षा क्या कडजुम्मा है यावत् कलियोगा है? हे गौतम! सिय (कदाचित्) कडजुम्मा है, सिय दावरजुम्मा है, सिय तेओगा है, सिय कलियोगा है।

६—अहो भगवान्! काल द्रव्य की अपेक्षा क्या कडजुम्मा है यावत् कलियोगा है? हे गौतम! कडजुम्मा है। शेष तीन नहीं।

७—अहो भगवान्! धर्मास्तिकाय प्रदेश की अपेक्षा क्या कडजुम्मा है यावत् कलियोगा है? हे गौतम! कडजुम्मा है। शेष तीन नहीं। इसी तरह बाकी पांचों द्रव्य कह देने चाहिये।

असंख्यात प्रदेश में अवगाढ है। अहो भगवान्! असंख्यात आकाश प्रदेशों में अवगाढ है तो क्या कडजुम्मा प्रदेशों में अवगाढ है यावत् कलियोगा प्रदेशों में अवगाढ है? हे गौतम! कडजुम्मा प्रदेशों में अवगाढ है। तेओगा दावरजुम्मा कलियोगा प्रदेशों में अवगाढ़ नहीं है। जिस तरह धर्मास्तिकाय का कहा उसी तरह बाकी अधर्मास्तिकाय आदि ५ द्रव्य, ७ नारकी, १२ देवलोक, ९ ग्रैवेयक, ५ अनुत्तरविमान, १ ईषत्प्राग्भारा (सिद्ध शिला) पृथ्वी का भी कह देना चाहिए।

२५ सूत्र जुम्मों के प्रश्नोत्तर के, ६ सूत्र द्रव्यके प्रकार के, ६ सूत्र द्रव्यार्थ के, ६ सूत्र प्रदेशार्थ के ६ सूत्र द्रव्यार्थकी अल्पाबोध के, ६ सूत्र प्रदेशार्थ की अल्पाबोधके, १२ सूत्र दो दो बोलों के अल्पाबोध के, १२ सूत्र द्रव्य प्रदेश की भेली अल्पाबोध के, ४० सूत्र धर्मास्तिकाय आदि के अवगाढ अनवगाढ के ये कुल ११९ (२५+६+६+६+६+६+१२+१२+४०=११९) सूत्र हुए।

सेवं भंते! सेवं भंते!!

(थोकड़ा नं० १४८)

श्री भगवतीजी सूत्र के २५ वें शतक के चौथे उद्देशे में जीवों के कडजुम्मों का थोकड़ा चलता है सो कहते हैं—

१—अहो भगवान्! क्या एक जीव द्रव्यार्थ रूप से (द्रव्य की अपेक्षा से) कडजुम्मा है? तेयोगा है? दावरजुम्मा है?

कलियोगा है ? हे गौतम ! कलियोगा है*। कडजुम्मा तेओगा दावरजुम्मा नहीं है। इसी तरह २४ दण्डक और सिद्ध भगवान् कह देना चाहिए।

२—अहो भगवान्! क्या बहुत जीव द्रव्य की अपेक्षा कडजुम्मा है यावत् कलियोगा हैं ? हे गौतम ! बहु वचन आसरी दो भेद हैं—ओघादेश (सामान्य) और विहाणादेश (विधानादेश-भेद) ओघादेश की अपेक्षा कडजुम्मा हैं, तेओगा, दावरजुम्मा कलियोगा नहीं। विहाणादेश की अपेक्षा कलियोगा हैं, कडजुम्मा तेओगा दावरजुम्मा नहीं हैं। नारकी आदि २४ दण्डक और सिद्ध भगवान् ओघादेश की अपेक्षा सिय (कदाचित्) कडजुम्मा, सिय तेओगा, सिय दावरजुम्मा, सिय कलियोगा हैं। विहाणादेश की अपेक्षा कलियोगा है, कडजुम्मा तेओगा दावरजुम्मा नहीं है।

३—अहो भगवान्! एक जीव प्रदेश की अपेक्षा क्या कडजुम्मा है ? यावत् कलियोगा है ? हे गौतम! प्रदेश दो प्रकार के हैं—जीव प्रदेश और शरीर प्रदेश। जीव प्रदेश की अपेक्षा कडजुम्मा है शेष तीन नहीं है। शरीर प्रदेश की अपेक्षा सिय कडजुम्मा, सिय तेओगा, सिय दावरजुम्मा, सिय

---

* जीव द्रव्य रूप से एक ही व्यक्ति है। इसलिए मात्र कल्योज रूप ही होता है।

बहुत जीव द्रव्य रूप से अनन्त हैं। इसलिये सामान्य रूप से वे कडजुम्मा (कृतयुग्म) ही होते हैं।

कलियोगा है। इस तरह नारकी आदि २४ ही दण्डक कह देने चाहिए। सिद्धभगवान् एक जीव की अपेक्षा जीवप्रदेश आसरी कडजुम्मा है। शेष तीन नहीं है। सिद्धभगवान् के शरीर नहीं है, इसलिये शरीर प्रदेश भी नहीं है।

४—अहो भगवान् ? बहुत जीव प्रदेशों की अपेक्षा क्या कडजुम्मा है यावत् कलियोगा है ? हे गौतम ! प्रदेश दो प्रकार के हैं–जीव प्रदेश और शरीर प्रदेश। जीव प्रदेश के दो भेद हैं–ओघादेश और विहाणादेश। ओघादेश की अपेक्षा कडजुम्मा है शेप तीन नहीं है। विहाणादेश की अपेक्षा कडजुम्मा है शेप तीन नहीं है। शरीर प्रदेश के भी दो भेद हैं–ओघादेश और विहाणादेश। ओघादेश की अपेक्षा सिय कडजुम्मा सिय तेओगा सिय दावरजुम्मा सिय कलियोगा है। विहाणादेश की अपेक्षा कडजुम्मा भी है, तेओगा भी है, दावरजुम्मा भी है, कलियोगा भी है। इसीतरह २४ दण्डक कह देना चाहिए। बहुत सिद्ध भगवान् में जीव प्रदेश के दो भेद हैं ओघादेश और विहाणादेश। ओघादेश की अपेक्षा कडजुम्मा है शेप तीन नहीं है और विहाणादेश की अपेक्षा भी कडजुम्मा है शेप तीन नहीं है। सिद्धों के शरीर नहीं है, इसलिए उनके शरीर प्रदेश भी नहीं हैं।

५—अहो भगवान् ! एक जीव ने क्या कडजुम्मा प्रदेश अवगाहे हैं यावत् कलियोगा प्रदेश अवगाहे हैं ? हे गौतम ! सिय कडजुम्मा प्रदेश अवगाहे हैं यावत् सिय कलियोगा प्रदेश अवगाहे हैं। इसी तरह नारकी आदि २४ ही दण्डक और सिद्ध

भगवान् का कह देना चाहिए।

६—अहो भगवान्! बहुत जीवों ने क्या कडजुम्मा प्रदेश अवगाहे हैं यावत् कलियोगा प्रदेश अवगाहे हैं? हे गौतम! ओघादेश की अपेक्षा कडजुम्मा प्रदेश अवगाहे हैं शेष तीन नहीं अवगाहे हैं। विहाणादेश की अपेक्षा कडजुम्मा भी यावत् कलियोगा भी अवगाहे हैं। नारकी आदि १६ दण्डक (पांच स्थावर को छोड़ कर) के जीवों ने ओघादेश की अपेक्षा सिय कडजुम्मा, सिय तेओगा, सिय दावरजुम्मा सिय कलियोगा प्रदेश अवगाहे हैं। विहाणादेश की अपेक्षा कडजुम्मा भी यावत् कलियोगा भी प्रदेश अवगाहे हैं। पांच स्थावर और सिद्ध भगवान् ने ओघादेश की अपेक्षा कडजुम्मा प्रदेश अवगाहे हैं, शेष तीन नहीं अवगाहे हैं और विहाणादेश की अपेक्षा कडजुम्मा भी यावत् कलियोगा भी प्रदेश अवगाहे हैं।

७—अहो भगवान्! एक जीव क्या कडजुम्मा समय की स्थितिवाला है यावत् कलियोगा समय की स्थिति वाला है? हे गौतम! * कडजुम्मा समय की स्थिति वाला है तेओगा दावरजुम्मा, कलियोगा समय की स्थिति वाला नहीं है। एक

---

* सामान्य जीव की स्थिति सर्व काल में शाश्वत होती है और सर्व काल नियत अनन्त समयात्मक होता है। इसलिए जीव कडजुम्मा समय की स्थिति वाला होता है। नारकी आदि भिन्न भिन्न समय की स्थिति वाले होते हैं। इसलिए वे किसी समय कडजुम्मा समय की स्थिति वाले होते हैं यावत् किसी समय कलियोगा समय की स्थिति वाले होते हैं।

जीव आसरी २४ ही दण्डक के जीव सिय (कदाचित्) कडजुम्मा समय की स्थिति वाले हैं यावत् सिय कलियोगा समय की स्थिति वाले हैं। सिद्ध भगवान् कडजुम्मा समय की स्थिति वाले हैं। शेष तीन नहीं है।

८—अहो भगवान्! बहुत जीव क्या कडजुम्मा समय की स्थिति वाले हैं यावत् कलियोगा समय की स्थिति वाले हैं? हे गौतम! * ओघादेश की अपेक्षा कडजुम्मा समय की स्थिति वाले हैं, शेष तीन नहीं हैं और विहाणादेश की अपेक्षा भी कडजुम्मा समय की स्थिति वाले हैं किन्तु तेओगा, दावरजुम्मा, कलियोगा समय की स्थिति वाले नहीं हैं।

बहुवचन आसरी २४ दण्डक के जीव ओघादेश की अपेक्षा × सिय कडजुम्मा यावत् सिय कलियोगा समय की स्थिति वाले हैं। विहाणादेश की अपेक्षा कडजुम्मा समय की स्थिति वाले भी होते हैं। सिद्ध भगवान् कडजुम्मा समय की स्थिति वाले हैं शेष तीन नहीं है।

---

* ओघादेश और विहाणादेश की अपेक्षा सब जीवों की स्थिति अनादि अनन्त काल की है। इसलिए वे कडजुम्मा समय की स्थिति वाले हैं।

× यदि सभी नारकी जीवों की स्थिति के समयों को एकत्रित किया जाय फिर उसमें चार का भाग दिया जाय तो सभी नारकी जीव ओघादेश की अपेक्षा कदाचित् कडजुम्मा समय की स्थिति वाले होंगे यावत् कदाचित् कलियोगा समय की स्थिति वाले होंगे।

६—अहो भगवान् ! क्या * एक जीव के काले वर्ण के पर्याय कडजुम्मा है यावत् कलियोगा है ? हे गौतम ! जीव काले वर्णके पर्याय आसरी तो कडजुम्मा भी नहीं है यावत् कलियोगा भी नहीं है। शरीर में काले वर्णकी पर्याय आसरी सिय कडजुम्मा है यावत् सिय कलियोगा है। जिस तरह काला वर्ण कहा उसी तरह बाकी १६ वर्णादिक कह देना चाहिए। इसी तरह २४ दण्डक कह देना चाहिए। यहाँ सिद्ध भगवान् की पृच्छा नहीं है क्योंकि उनके शरीर नहीं होता, इसलिए वर्णादिक नहीं होते हैं।

अहो भगवान् ! क्या बहुत जीवों के काले वर्ण के पर्याय कडजुम्मा है यावत् कलियोगा है ? हे गौतम ! जीव प्रदेश आसरी तो कडजुम्मा भी नहीं है यावत् कलियोगा भी नहीं है। शरीर प्रदेश आसरी दो भेद हैं—ओघादेश और विहाणा देश। ओघादेश की अपेक्षा सिय कडजुम्मा यावत् सिय कलियोगा हैं। विहाणादेश की अपेक्षा कडजुम्मा भी है यावत् कलियोगा भी है। जिस तरह काला वर्ण कहा उसी तरह बाकी १६ वर्णादिक कह देना चाहिए। जिस तरह समुच्चय जीव कहा उसी तरह २४ दण्डक कह देना चाहिए। यहाँ सिद्ध भगवान् की पृच्छा नहीं है क्योंकि उनके शरीर नहीं होता,

* जीवप्रदेश अमूर्त होने से उसके काला आदि वर्ण के पर्याय नहीं होते हैं। शरीर सहित जीवकी अपेक्षा शरीर के वर्ण चारों राशि-रूप हो सकते हैं।

इसलिए वर्णादिक नहीं होते हैं।

१०—अहो भगवान्! क्या एक जीव के मतिज्ञान के पर्याय कडजुम्मा है यावत् कलियोगा है? हे गौतम! * सिय कडजुम्मा है यावत् सिय कलियोगा होते हैं। इसी तरह ÷ एकेन्द्रिय को छोड़ कर बाकी १९ दण्डक में कह देना चाहिए।

बहुवचन आसरी जीवों के मतिज्ञान के पर्याय × ओघादेश की अपेक्षा सिय कडजुम्मा है यावत् सिय कलियोगा हैं। विहाणादेश की अपेक्षा कडजुम्मा भी हैं यावत् कलियोगा भी

---

* आवरणके क्षयोपशम की विचित्रता से मतिज्ञान की विशेषताओं को तथा मतिज्ञान के अविभाज्य (जिसके विभाग नहीं किये जा सकें) सूक्ष्म अंशों को मतिज्ञान के पर्याय कहा जाता है। ये अनन्त हैं किन्तु क्षयोपशम की विचित्रता से उनका अनन्तपणा एक सरीखा नहीं है। इसलिए भिन्न समय की अपेक्षा ये कदाचित् कडजुम्मा होते हैं यावत् कलियोगा होते हैं।

÷ एकेन्द्रिय जीव में समकित नहीं होती। इसलिए उसके मतिज्ञान नहीं होता है। इसलिये यहाँ पर 'एकेन्द्रिय जीव को छोड़कर' ऐसा कहा गया है।

× यदि सब जीवों के मतिज्ञान के पर्यायों को इकट्ठा किया जाय तो ओघादेश से भिन्न भिन्न काल की अपेक्षा चारों राशि रूप होते हैं क्योंकि क्षयोपशम की विचित्रता के कारण उनके मतिज्ञान के पर्याय अनवस्थितरूप से अनन्त हैं। विहाणादेश की अपेक्षा एक काल में भी चारों राशि रूप होते हैं।

हैं। इसी तरह एकेन्द्रिय को छोड़ कर बाकी १९ दण्डक में कह देना चाहिए। जिस तरह मतिज्ञान का कहा उसी तरह श्रुतज्ञान का भी कह देना चाहिए। इसी तरह अवधिज्ञान का भी कह देना चाहिए किन्तु इतनी विशेषता है कि तीन विकलेन्द्रिय नहीं कहना चाहिए (तीन विकलेन्द्रियों में अवधि ज्ञान नहीं होता है)। इसी तरह मनःपर्यय ज्ञान का भी कह देना चाहिए किन्तु इतनी विशेषता है कि समुच्चय जीव और मनुष्य में ही कहना चाहिए, शेष दण्डक में नहीं कहना चाहिए, (मनःपर्यय ज्ञान मनुष्य को ही होता है, दूसरे जीवों को नहीं होता है)। एक जीव आसरी केवलज्ञान की * कडजुम्मा पर्याय कहना चाहिए, शेष तीन नहीं कहना चाहिए। इसी तरह मनुष्य और सिद्ध भगवान् में कह देना चाहिए। बहुत जीव आसरी ओघादेश और विहाण देश की अपेक्षा कडजुम्मा पर्याय होते हैं, शेष तीन नहीं होते हैं। इसी तरह मनुष्य और सिद्ध कह देना चाहिए।

मति अज्ञान और श्रुत अज्ञान एक जीव आसरी और बहुत जीव आसरी मतिज्ञान की तरह कह देना चाहिए। किन्तु इतनी विशेषता है कि २४ ही दण्डक में कहना चाहिए। विभंगज्ञान का भी मतिज्ञान की तरह कह देना चाहिए किन्तु १६ दण्डक (एकेन्द्रिय और विकलेन्द्रियों को छोड़ कर) में

* केवलज्ञान के पर्यायों का अनन्तपणा अवस्थित है इसलिए वे कडजुम्मा राशि रूप ही होते हैं।

ही कहना चाहिए। चक्षुदर्शन १७ दण्डक में, अचक्षुदर्शन २४ दण्डक में, अवधिदर्शन १६ दण्डक में मतिज्ञान की तरह कह देना चाहिए। केवल दर्शन केवलज्ञान की—पर्याप की तरह कहना चाहिये।

सेवं भंते ! सेवं भंते !!

थोकड़ा नं० १७६

श्री भगवतीजी सूत्र के २५ वें शतक के चौथे उद्देशे में 'जीव कम्पमान अकम्पमान' का थोकड़ा चलता है सो कहते हैं—

१—अहो भगवान् ! क्या जीव सकम्प है या निष्कम्प है ? हे गौतम ! जीव सकम्प भी है और निष्कम्प भी है। अहो भगवान् ! इसका क्या कारण ? हे गौतम ! जीव के दो भेद हैं-सिद्ध और संसारी। सिद्ध के दो भेद हैं—अनन्तर सिद्ध और परम्परा सिद्ध। परम्परा सिद्ध तो निष्कम्प है। अनन्तर सिद्ध सकम्प * हैं। वे सर्व से (सब अंशों से) कम्पते हैं, देश से (कुछ अंशों से) नहीं कम्पते हैं।

---

* सिद्धत्व प्राप्तिके प्रथम समयमें अनन्तर सिद्ध कहलाते हैं क्योंकि उन्हें एक समयका भी अन्तर नहीं होता। जो सिद्धत्व के प्रथम समय में वर्तमान सिद्ध जीव हैं उनमें कम्पन है। क्योंकि सिद्धि गमन समय और सिद्धत्व प्राप्ति का समय एक ही होने से और सिद्धि गमन समय में गमन क्रिया के होने से उस समय वे सकम्प होते हैं। सिद्धत्व प्राप्ति होने के पश्चात् जिन्हें समयादिका अन्तर पड़ जाता है वे परम्परा सिद्ध कहलाते हैं और वे निष्कम्प होते हैं।

संसारीजीवके दो भेद हैं–शैलेशी प्रतिपन्न(शैलेशी अवस्थाको प्राप्त हुए, चौदहवें गुणस्थान वाले जीव) और अशैलेशी प्रतिपन्न (पहले गुणस्थान से लेकर तेरहवें गुणस्थान तक के जीव)। शैलेशी प्रतिपन्न जीव तो निष्कम्प * होते हैं और अशैलेशी प्रतिपन्न सकम्प होते हैं वे देश से ÷ (कुछ अंशों से) भी कम्पते हैं और सर्व से (सब अंशोंसे) भी कम्पते हैं। × विग्रह गति वाले जीव सर्व से कम्पते हैं, अविग्रह गति वाले जीव देश से कम्पते हैं। इस तरह २४ ही दण्डक के जीव देश से भी कम्पते हैं और सर्व से भी कम्पते हैं।

सेवं भंते ! सेवं भंते !!

---

* जो मोक्ष जाने के समय पहले शैलेशी को प्राप्त हुए हैं उनके योग का सर्वथा निरोध होने से वे निष्कम्प हैं।

÷ ईलिका गति से उत्पत्तिस्थान को जाते हुए जीव देश से सकम्प हैं क्योंकि उनका पहले के शरीर में रहा हुआ अंश गति क्रिया रहित होने से निश्चल है।

× विग्रह गति को प्राप्त यानी जो मरकर विग्रह गति द्वारा उत्पत्ति स्थान को जाते हैं वे गेंद की गति से सर्वात्म रूप से उत्पन्न होते हैं इसलिये वे सर्वतः सकम्प हैं। जो जीव विग्रह गतिको प्राप्त नहीं है वे ऋजुगतिवाले और अवस्थित–ये दो प्रकार के हैं। उनमें से यहाँ केवल अवस्थित ग्रहण किये गये हैं ऐसा सम्भव है। ये शरीरमें रह कर मरण समुद्घात् कर ईलिका गति द्वारा उत्पत्ति क्षेत्र का स्पर्श करते हैं इसलिए वे देश से सकम्प हैं। अथवा उस क्षेत्रमें रहे हुए जीव हस्त-पादादि अवयव चलाने से देश से सकम्प है।

थोकड़ा नं० १८०

श्री भगवतीजी सूत्र के २५ वें शतक के चौथे उद्देशे में 'पुद्गलों की बहुया' (बहुत्व) का थोकड़ा चलता है सो कहते हैं—

१—अहो भगवान्! पुद्गल के कितने भेद हैं? हे गौतम! पुद्गलके चार भेद हैं–द्रव्य, क्षेत्र, काल, भाव। द्रव्यकी अपेक्षा परमाणु से लेकर अनन्त प्रदेशी स्कन्ध तक १३ भेद होते हैं। क्षेत्र की अपेक्षा एक आकाश प्रदेश अवगाहे से लेकर असंख्यात आकाश प्रदेश अवगाहे तक १२ भेद होते हैं। काल की अपेक्षा एक समय की स्थिति से लेकर असंख्यात समय की स्थिति तक १२ भेद होते हैं। भावकी अपेक्षा एक गुण काला से लेकर अनन्त गुण काला यावत् अनन्त गुण रूक्ष तक २६० भेद होते हैं। इसप्रकार चारों को मिला कर २९७ (१३+१२+१२+२६०=२९७) भेद होते हैं।

२—अहो भगवान्! परमाणु पुद्गल और दो प्रदेशी स्कन्धमें द्रव्यार्थरूप से कौन किससे अल्प बहु (कम ज्यादा) है? हे गौतम! दो प्रदेशी स्कन्धकी अपेक्षा परमाणु पुद्गल द्रव्यार्थ रूप से बहुया + (बहुत) हैं। इसी तरह तीन प्रदेशी स्कन्ध की अपेक्षा दो प्रदेशी स्कन्ध द्रव्यार्थरूप से बहुत हैं। इसी तरह यावत् दस प्रदेशी स्कन्ध से नौ प्रदेशी स्कन्ध द्रव्यार्थ रूप से

+ यह थोकड़ा बहुयाका है इसलिये बहुत की जगह बहुया बोलना चाहिये।

बहुत है। दसप्रदेशी स्कन्ध से संख्यात-प्रदेशी स्कन्ध द्रव्यार्थ रूप से बहुत हैं। संख्यातप्रदेशी स्कन्ध से असंख्यातप्रदेशी स्कन्ध द्रव्यार्थ रूप से बहुत हैं। अनन्त प्रदेशी स्कन्ध से असंख्यात प्रदेशी स्कन्ध बहुत हैं। *

३—अहो भगवान्! परमाणु पुद्गल और दो प्रदेशी स्कन्ध में प्रदेशार्थरूप से कौन किससे कम ज्यादा हैं? हे गौतम! परमाणु पुद्गल से दो प्रदेशी स्कन्ध प्रदेशार्थ रूप से बहुत हैं। इसीप्रकार यावत् नौ प्रदेशी स्कन्ध से दसप्रदेशी स्कन्ध प्रदेशार्थ रूप से बहुत हैं। दस प्रदेशी स्कन्ध से संख्यातप्रदेशी स्कन्ध प्रदेशार्थ रूप से बहुत हैं। संख्यात प्रदेशी स्कन्ध से असंख्यात प्रदेशी स्कन्ध प्रदेशार्थ रूपसे बहुत हैं और अनन्त प्रदेशी स्कन्ध से असंख्यात प्रदेशी स्कन्ध प्रदेशार्थ रूप से बहुत हैं।

४—अहो भगवान्! एक प्रदेश अवगाहे हुए पुद्गल और दो प्रदेश अवगाहे पुद्गलों में द्रव्यार्थ रूप से कौन किससे

---

* दो प्रदेशी स्कन्ध की अपेक्षा परमाणु सूक्ष्म है और वे एक एक हैं, इसलिये बहुत हैं। दो प्रदेशी स्कन्ध परमाणु की अपेक्षा स्थूल है, इसलिये वे थोड़े हैं। इस तरह पूर्व पूर्व की संख्या बहुत है और पीछे पीछे की संख्या थोड़ी है। परन्तु दसप्रदेशी स्कन्ध की अपेक्षा संख्यात-प्रदेशी स्कन्ध बहुत हैं क्योंकि संख्याताके स्थान बहुत हैं। संख्यातप्रदेशी की अपेक्षा असंख्यातप्रदेशी स्कन्ध बहुत है क्योंकि असंख्याताके स्थान बहुत हैं। असंख्यातप्रदेशी की अपेक्षा अनन्तप्रदेशी स्कन्ध थोड़े हैं क्योंकि उनका उसी प्रकार का सूक्ष्म परिणाम है।

कम ज्यादा है ? हे गौतम ! दो प्रदेश अवगाहे पुद्गलों से ए
प्रदेश अवगाहे पुद्गल द्रव्यार्थ रूप से विशेषाधिक हैं। * इ
तरह यावत् दस प्रदेश अवगाहे पुद्गलों से नौ प्रदेश अवग
पुद्गल द्रव्यार्थ रूप से विशेषाधिक हैं। दस प्रदेशावगा
पुद्गलों से संख्यात प्रदेशावगाढ पुद्गल द्रव्यार्थ रूप से ब
हैं। संख्यात प्रदेशावगाढ पुद्गलों से असंख्यात प्रदेशावग
पुद्गल द्रव्यार्थ रूप से बहुत हैं।

५—अहो भगवान् ! एक प्रदेशावगाढ पुद्गल और द
प्रदेशावगाढ पुद्गलोंमें प्रदेशार्थ रूप से कौन किससे कम ज्या
है ? हे गौतम ! एक प्रदेशावगाढ पुद्गलों से दो प्रदेशावगा
पुद्गल प्रदेशार्थ रूप से विशेषाधिक हैं। इसीतरह यावत् न
आकाशप्रदेशावगाढ पुद्गलों से दस प्रदेशावगाढ पुद्ग
प्रदेशार्थ रूप से विशेषाधिक हैं। दस आकाश प्रदेशावगाढ पु
गलों से संख्यात आकाशप्रदेशावगाढ पुद्गल प्रदेशार्थ रू
बहुत हैं। संख्यात आकाशप्रदेशावगाढ पुद्गलों से असंख्या
प्रदेशावगाढ पुद्गल प्रदेशार्थ रूप से बहुत हैं।

६—अहो भगवान् ! एक समय की स्थिति वाले पुद्ग
और दो समय की स्थिति वाले पुद्गलों में द्रव्यार्थ रूप से कौ

* परमाणु से लेकर अनन्त प्रदेशी स्कन्ध तक एक प्रदेशावगा
होते हैं। दो प्रदेशी स्कन्ध से लेकर अनन्त प्रदेशी स्कन्ध तक दो प्रदेशा
वगाढ होते हैं। इसी तरह तीन प्रदेशावगाढ यावत् असंख्यप्रदेशाव
गाढ तक होते हैं।

किससे कम ज्यादा हैं ? हे गौतम ! जिस तरह से क्षेत्र की
ही उसी तरह से काल की वक्तव्यता कह देनी चाहिए।

७—अहो भगवान् ! एक गुण काला और दो गुण काला
पुद्गलों में द्रव्यार्थ रूप से कौन किससे कम ज्यादा हैं ? हे
गौतम ! जिस तरह परमाणु पुद्गल की वक्तव्यता कही उसी
तरह पांच वर्ण, दो गन्ध, और पांच रस इन १२ की वक्तव्यता
कह देनी चाहिए।

८—अहो भगवान् ! एक गुण कर्कश और दो गुण कर्कश
पुद्गलों में द्रव्यार्थ रूप से कौन किससे कम ज्यादा हैं ? हे
गौतम ! एक गुण कर्कश पुद्गलों से दो गुण कर्कश पुद्गल
विशेपाधिक हैं। इसी तरह यावत् नौ गुण कर्कश पुद्गलों से दस
गुण कर्कश पुद्गल द्रव्यार्थ रूप से विशेपाधिक हैं। दस गुण
कर्कश पुद्गलों से संख्यात गुण कर्कश पुद्गल द्रव्यार्थ रूप से बहुत
हैं। संख्यात गुण कर्कश पुद्गलों से असंख्यात गुण कर्कश पुद्गल
द्रव्यार्थ रूप से बहुत हैं। असंख्यात गुण कर्कश पुद्गलों से
अनन्तगुण कर्कश पुद्गल द्रव्यार्थ रूप से बहुत हैं। जिस
तरह द्रव्यार्थ रूप से कहा उसी तरह प्रदेशार्थ रूप से भी कह
देना चाहिए।

जिस तरह कर्कश का कहा उसी तरह मृदु (कोमल), गुरु
(भारी) और लघु (हल्का) का भी कह देना चाहिए।

जिस तरह वर्ण का कहा उसी तरह से शीत, उष्ण,
स्निग्ध और रूक्ष का कह देना चाहिए।

समुच्चय के २६७ और द्रव्यार्थ के २६७ तथा प्रदेशार्थ के २६७ ये सब मिला कर ८०१ सूत्र हुए।

सेवं भंते ! सेवं भंते !!

थोकड़ा नं० १८१

श्री भगवतीजी सूत्र के २५ वें शतक के चौथे उद्देशे में ६६ बोलों की अल्पाबहुत्व चलती है सो कहते हैं—

६६ बोलों की अल्पाबहुत्व श्री पन्नवणाजी सूत्र के तीसरे पद में है उस तरह से कह देनी चाहिए किन्तु इतनी विशेषता है कि संख्यात गुण कर्कश पुद्गल प्रदेशार्थ रूप से असंख्यात गुणा कहना चाहिए। इसी तरह गुरु लघु मृदु कह देना चाहिए। *

सेवं भंते ! सेवं भंते !!

थोकड़ा नं० १८२

श्री भगवतीजी सूत्र के २५ वें शतक के चौथे उद्देशे में 'अजीव के कडजुम्मा' का थोकड़ा चलता है सो कहते हैं—

१—अहो भगवान् ! एक परमाणु पुद्गल द्रव्य आसरी (दव्वट्ठयाए) क्या कडजुम्मा है या तेओगा है या दावरजुम्मा है या कलियोगा है ? हे गौतम ! कलियोगा है, शेष तीन नहीं है। इसी तरह अनन्तप्रदेशी स्कन्ध तक कह देना चाहिए।

२—अहो भगवान् ! बहुत परमाणु पुद्गल द्रव्य आसरी

* यह थोकड़ा इस संस्था से प्रकाशित श्री पन्नवणा सूत्र के थोकड़ों के प्रथम भाग के पृष्ठ ४५ से ४८ पर है।

क्या कडजुम्मा हैं यावत् कलियोगा हैं ? हे गौतम ! ओघादेश से सिय कडजुम्मा यावत् सिय कलियोगा हैं। विहाणादेश से कलियोगा हैं। शेष तीन नहीं है इसी तरह अनन्त प्रदेशी स्कन्ध तक कह देना चाहिए।

३—अहो भगवान् ! क्या परमाणु पुद्गल प्रदेश आसरी कडजुम्मा हैं यावत् कलियोगा है। हे गौतम ! कलियोगा है, शेष ३ नहीं है। इसी तरह दो प्रदेशी स्कन्ध प्रदेश आसरी दावर जुम्मा है। तीन प्रदेशी स्कन्ध प्रदेश आसरी तेओगा है। चार प्रदेशी स्कन्ध प्रदेश आसरी कडजुम्मा है। पांचप्रदेशी स्कन्ध प्रदेश आसरी कलियोगा है। छह प्रदेशी स्कन्ध प्रदेश आसरी दावरजुम्मा है। सात प्रदेशी स्कन्ध प्रदेश आसरी तेओगा है। आठ प्रदेशी स्कन्ध प्रदेश आसरी कडजुम्मा है। नौ प्रदेशी स्कन्ध प्रदेश आसरी कलियोगा है। दस प्रदेशी स्कन्ध प्रदेश आसरी दावरजुम्मा है। संख्यात प्रदेशी स्कन्ध सिय कडजुम्मा यावत् सिय कलियोगा है। असंख्यात प्रदेशी स्कन्ध प्रदेश आसरी सिय कडजुम्मा है यावत् कलियोगा है। अनन्त प्रदेशी स्कन्ध प्रदेश आसरी सिय कडजुम्मा है यावत् सिय कलियोगा है।

४—अहो भगवान् ! बहुत परमाणु पुद्गल द्रव्य आसरी क्या कडजुम्मा हैं यावत् कलियोगा हैं ? हे गौतम ! ओघादेश से सिय कडजुम्मा यावत् सिय कलियोगा हैं। विहाणादेश से कलियोगा हैं। इस तरह अनन्त प्रदेशी स्कन्ध तक कह

देना चाहिए।

५—अहो भगवान् ! बहुत परमाणु पुद्गल प्रदेश आसरी क्या कडजुम्मा हैं यावत् कलियोगा हैं ? हे गौतम ! ओघादेश से सिय कडजुम्मा हैं यावत् सिय कलियोगा हैं। विहाणादेश से कलियोगा हैं।

बहुत दो प्रदेशी स्कन्ध प्रदेश आसरी ओघादेश से सिय कडजुम्मा सिय दावरजुम्मा हैं, तेओगा और कलियोगा नहीं हैं, विहाणादेश से दावरजुम्मा हैं, शेष तीन नहीं हैं।

बहुत तीन प्रदेशी स्कन्ध प्रदेश आसरी ओघादेश से सिय कडजुम्मा यावत् सिय कलियोगा हैं। विहाणादेश से तेओगा हैं शेष तीन भांगे नहीं होते हैं।

बहुत चार प्रदेशी स्कन्ध ओघादेश से कडजुम्मा हैं और विहाणादेश से भी कडजुम्मा हैं; शेष तीन भांगे नहीं हैं। बहुत पांच प्रदेशी स्कन्ध का कथन परमाणु की तरह, बहुत छः प्रदेशी स्कन्ध का कथन दो प्रदेशी की तरह, बहुत सात प्रदेशी स्कन्ध का कथन तीन प्रदेशी की तरह; बहुत आठप्रदेशी स्कन्ध का कथन चार प्रदेशी स्कन्ध की तरह, बहुत नौ प्रदेशी स्कन्ध का कथन परमाणु की तरह, बहुत दस प्रदेशी स्कन्ध का कथन दो प्रदेशी की तरह कह देना चाहिए। बहुत संख्यात प्रदेशी स्कन्ध प्रदेश आसरी ओघादेश से सिय कडजुम्मा यावत् सिय कलियोगा हैं। विहाणादेश से कडजुम्मा भी हैं यावत् कलियोगा भी हैं। जिस तरह संख्यात प्रदेशी स्कन्ध कहा उसी तरह

से असंख्यात प्रदेशी स्कन्ध और अनन्त प्रदेशी स्कन्ध कह देना चाहिए।

६—अहो भगवान्! परमाणु पुद्गल ने क्या कडजुम्मा प्रदेश अवगाहे हैं यावत् कलियोगा प्रदेश अवगाहे हैं? हे गौतम! कलियोगा प्रदेश अवगाहे हैं, शेष तीन नहीं अवगाहे हैं। दो प्रदेशी स्कन्ध ने सिय दावरजुम्मा सिय कलियोगा प्रदेश अवगाहे हैं, शेष दो नहीं अवगाहे हैं। तीन प्रदेशी स्कन्ध ने सिय दावरजुम्मा, सिय तेओगा, सिय कलियोगा प्रदेश अवगाहे हैं, कडजुम्मा प्रदेश नहीं अवगाहे हैं। चार प्रदेशी स्कन्ध ने सिय कडजुम्मा यावत् सिय कलियोगा प्रदेश अवगाहे हैं। जिस तरह चार प्रदेशी स्कन्ध का कहा उसी तरह पांच प्रदेशी स्कन्ध यावत् अनन्त प्रदेशी तक कह देना चाहिए।

बहुत परमाणु पुद्गल ने ओघादेश से कडजुम्मा प्रदेश अवगाहे हैं, शेष तीन नहीं अवगाहे हैं, विहाणादेश से कलियोगा प्रदेश अवगाहे हैं, शेष तीन नहीं अवगाहे हैं। बहुत दो प्रदेशी स्कन्ध ने ओघादेश से कडजुम्मा प्रदेश अवगाहे हैं, शेष तीन नहीं अवगाहे हैं, विहाणादेश से दावरजुम्मा प्रदेश भी और कलियोगा प्रदेश भी अवगाहे हैं, शेष दो भांगा नहीं अवगाहे हैं। बहुत तीन प्रदेशी स्कन्ध ने ओघादेश से कडजुम्मा प्रदेश अवगाहे हैं, शेष तीन नहीं अवगाहे हैं, विहाणादेश से तेओगा प्रदेश भी, दावरजुम्मा प्रदेश भी और कलियोगा प्रदेश भी अवगाहे हैं, कडजुम्मा प्रदेश नहीं अवगाहे हैं। बहुत

चार प्रदेशी स्कन्ध ने ओघादेश से कडजुम्मा प्रदेश अवगा हैं, शेष तीन नहीं अवगाहे हैं, विहाणादेश से कडजुम्मा प्रदेश भी अवगाहे हैं यावत् कलियोगा प्रदेश भी अवगाहे हैं। जिस तरह चार प्रदेशी का कहा उसी तरह पांच प्रदेशी स्कन्ध यावत् अनन्तप्रदेशी स्कन्ध तक कह देना चाहिए।

७—अहो भगवान्! परमाणु पुद्गल क्या कडजुम्मा समय की स्थितिवाले हैं यावत् कलियोगा समय की स्थिति वाले हैं? हे गौतम! परमाणु पुद्गल सिय कडजुम्मा समयकी स्थितिवाले हैं यावत् कलियोगा समय की स्थिति वाले हैं। इसी तरह यावत् अनन्त प्रदेशी स्कन्ध तक कह देना चाहिए।

बहुत परमाणु पुद्गल ओघादेश से सिय कडजुम्मा समय की स्थिति वाले हैं यावत् सिय कलियोगा समय की स्थितिवाले हैं। विहाणादेश से कडजुम्मा समयकी स्थितिवाले भी हैं यावत् कलियोगा समय की स्थिति वाले भी हैं। इसी तरह यावत् अनन्त प्रदेशी स्कन्ध तक कह देना चाहिए।

८—अहो भगवान्! परमाणु पुदगल के काले वर्ण के पर्याय क्या कडजुम्मा हैं यावत् कलियोगा हैं? हे गौतम! जिस तरह स्थिति का कहा उसी तरह अनन्तप्रदेशी तक काले वर्णका कह देना चाहिए। इसी तरह वर्णादि १६ कह देना चाहिए।

अहो भगवान्! अनन्त प्रदेशी स्कन्ध में कर्कश स्पर्शके पर्याय क्या कडजुम्मा यावत् कलियोगा हैं? हे गौतम! सिय कडजुम्मा यावत् सिय कलियोगा हैं। बहुत अनन्तप्रदेशी स्कन्ध में

ोघादेश से सिय कडजुम्मा यावत् सिय कलियोगा हैं। विहाणा-
श से कडजुम्मा भी हैं यावत् कलियोगा भी हैं। इसी तरह
रु लघु मृदु (कोमल) स्पर्श का कह देना चाहिए।

९—अहो भगवान् ! क्या परमाणु पुद्गल सअड्ढे—सार्द्ध
जिसका आधा भाग हो सके) है या अणड्ढे—अनर्द्ध (जिसका
प्राधा भाग न हो सके) है ? हे गौतम ! सार्द्ध नहीं है किन्तु
मनर्द्ध है। दो प्रदेशी स्कन्ध सार्द्ध है *, अनर्द्ध नहीं है।
ीन प्रदेशी, पांच प्रदेशी, सात प्रदेशी, नौ प्रदेशी स्कन्ध
रमाणु की तरह कह देना चाहिए। चार प्रदेशी, छह प्रदेशी,
आठ प्रदेशी, दस प्रदेशी स्कन्ध दो प्रदेशी स्कन्ध की तरह कह
देना चाहिए। संख्यात प्रदेशी स्कन्ध सिय सार्द्ध है सिय
अनर्द्ध है। इसी तरह असंख्यात प्रदेशी अनन्त प्रदेशी स्कन्ध
का कह देना चाहिए। बहुत परमाणु पुद्गल यावत् बहुत
अनंत प्रदेशी स्कन्ध सार्द्ध (स अड्ढे) भी होते हैं और अनर्द्ध
(अणड्ढे) भी होते हैं ×।

सेवं भंते ! सेवं भंते !!

---

* सम (बेकी) संख्या वाले प्रदेशों के जो स्कन्ध हैं वे सार्द्ध हैं क्योंकि उनके बराबर दो भाग हो सकते हैं। विषम (एकी) संख्यावाले प्रदेशों के जो स्कन्ध हैं वे अनर्द्ध हैं क्योंकि उनके बराबर दो भाग नहीं हो सकते हैं।

× जब बहुत परमाणु सम संख्या वाले होते हैं। तब सार्द्ध होते हैं और जब विषम संख्या वाले होते हैं तब अनर्द्ध होते हैं क्योंकि परमाणु संघात (परस्पर मिलने से) और भेद (अलग होने से)

थोकड़ा नं० १८३

श्री भगवतीजी सूत्र के २५ वें शतक के चौथे उद्देशे में 'अजीव कम्पमान' का थोकड़ा चलता है सो कहते हैं—

१—अहो भगवान् ! क्या परमाणु सेया (सकम्प) है या निरेया (निष्कम्प) है ? हे गौतम ! सिय सकम्प और सिय निष्कम्प है। इसी तरह दो प्रदेशी स्कन्ध यावत् अनन्त प्रदेशी स्कन्ध तक कह देना चाहिए। बहुत परमाणु पुद्गल यावत् बहुत अनन्त प्रदेशी स्कन्ध सदा काल सकम्प भी रहते हैं और सदा काल निष्कम्प भी रहते हैं।

२—अहो भगवान् ! परमाणु पुद्गल कितने काल तक सकम्प रहता है ? हे गौतम ! जघन्य एक समय, उत्कृष्ट आवलिका के असंख्यातवें भाग तक सकम्प रहता है।

३—अहो भगवान् ! परमाणु पुद्गल कितने काल तक निष्कम्प रहता है ? हे गौतम ! जघन्य एक समय, उत्कृष्ट असंख्याताकाल तक निष्कम्प रहता है। इसी तरह दो प्रदेशी स्कन्ध से लगा कर अनन्त प्रदेशी स्कन्ध तक कह देना चाहिए। बहुत परमाणु पुद्गल यावत् बहुत अनन्त प्रदेशी स्कन्ध सदा काल सकम्प रहते हैं और सदा काल निष्कम्प रहते हैं।

४—अहो भगवान् ! सकम्प परमाणु पुद्गल का कितने काल का अन्तर होता है अर्थात् सकम्प अवस्था का त्याग कर

रूप होने से उनकी संख्या अवस्थित नहीं है। इसलिए वे सार्द्ध और अनर्द्ध दोनों रूप होते हैं।

फिर पीछा कितने काल बाद कम्पता है ? हे गौतम ! * स्वस्थान आसरी और परस्थान आसरी जघन्य एक समय का, उत्कृष्ट असंख्याता काल का अन्तर होता है।

५—अहो भगवान् ! निष्कम्प परमाणु पुद्गल का अन्तर कितने काल का होता है ? हे गौतम ! स्वस्थान आसरी जघन्य एक समय, उत्कृष्ट आवलिका का असंख्यातवां भाग होता है। और परस्थान आसरी जघन्य एक समय, उत्कृष्ट असंख्याता काल का होता है।

सकम्प दो प्रदेशी स्कन्ध का अन्तर स्वस्थान आसरी जघन्य एक समय का उत्कृष्ट असंख्याता काल का होता है

---

* जब परमाणु परमाणु अवस्था में रहता है तब स्वस्थान कहलाता है। जब परमाणु स्कन्ध अवस्था में होता है तब परस्थान कहलाता है। जब परमाणु एक समय तक कम्पमान अवस्था से बन्द रह कर फिर चलता है तब स्वस्थान आसरी जघन्य एक समय का अन्तर होता है। जब परमाणु पुद्गल असंख्याता काल तक किसी एक जगह स्थिर रह कर फिर कम्पायमान होता है तब उत्कृष्ट असंख्याता काल का अन्तर होता है। जब परमाणु दो प्रदेशी आदि स्कन्ध के अन्तरगत होता है और जघन्य से एक समय चलन क्रिया से बन्द रह कर फिर चलता है तब परस्थान आसरी जघन्य एक समय का अन्तर होता है। जब परमाणु असंख्यात काल तक दो प्रदेशी आदि स्कन्धों में रहकर फिर स्कन्ध से अलग होकर चलायमान होता है तब परस्थान आसरी उत्कृष्ट असंख्यात काल का अन्तर होता है।

थोकड़ा नं० १८३

श्री भगवतीजी सूत्र के २५-वें शतक के चौथे उद्देशे में 'अजीव कम्पमान' का थोकड़ा चलता है सो कहते हैं—

१—अहो भगवान् ! क्या परमाणु सेया (सकम्प) है या निरेया (निष्कम्प) है? हे गौतम ! सिय सकम्प और सिय निष्कम्प है। इसी तरह दो प्रदेशी स्कन्ध यावत् अनन्त प्रदेशी स्कन्ध तक कह देना चाहिए। बहुत परमाणु पुद्गल यावत् बहुत अनन्त प्रदेशी स्कन्ध सदा काल सकम्प भी रहते हैं और सदा काल निष्कम्प भी रहते हैं।

२—अहो भगवान् ! परमाणु पुद्गल कितने काल तक सकम्प रहता है? हे गौतम ! जघन्य एक समय, उत्कृष्ट आवलिका के असंख्यातवें भाग तक सकम्प रहता है।

३—अहो भगवान् ! परमाणु पुद्गल कितने काल तक निष्कम्प रहता है? हे गौतम ! जघन्य एक समय, उत्कृष्ट असंख्याताकाल तक निष्कम्प रहता है। इसी तरह दो प्रदेशी स्कन्ध से लगाकर अनन्त प्रदेशी स्कन्ध तक कह देना चाहिए। बहुत परमाणु पुद्गल यावत् बहुत अनन्त प्रदेशी स्कन्ध सदा काल सकम्प रहते हैं और सदा काल निष्कम्प रहते हैं।

४—अहो भगवान् ! सकम्प परमाणु पुद्गल का कितने काल का अन्तर होता है अर्थात् सकम्प अवस्था का त्याग कर

रूप होने से उनकी संख्या अवस्थित नहीं है। इसलिए वे सार्द्ध और अनर्द्ध दोनों रूप होवे हैं।

फिर पीछा कितने काल बाद कम्पता है ? हे गौतम ! * स्वस्थान आसरी और परस्थान आसरी जघन्य एक समय का, उत्कृष्ट असंख्याता काल का अन्तर होता है।

५—अहो भगवान् ! निष्कम्प परमाणु पुद्गल का अन्तर कितने काल का होता है ? हे गौतम ! स्वस्थान आसरी जघन्य एक समय, उत्कृष्ट आवलिका का असंख्यातवां भाग होता है। और परस्थान आसरी जघन्य एक समय, उत्कृष्ट असंख्याता काल का होता है।

सकम्प दो प्रदेशी स्कन्ध का अन्तर स्वस्थान आसरी जघन्य एक समय का उत्कृष्ट असंख्याता काल का होता है

---

* जब परमाणु परमाणु अवस्था में रहता है तब स्वस्थान कहलाता है। जब परमाणु स्कन्ध अवस्था में होता है तब परस्थान कहलाता है। जब परमाणु एक समय तक कम्पमान अवस्था से मन्द रह कर फिर चलता है तब स्वस्थान आसरी जघन्य एक समय का अन्तर होता है। जब परमाणु पुद्गल असंख्याता काल तक किसी एक जगह स्थिर रह कर फिर कम्पायमान होता है तब उत्कृष्ट असंख्याता काल का अन्तर होता है। जब परमाणु दो प्रदेशी आदि स्कन्ध के अन्तरगत होता है और जघन्य से एक समय चलन क्रिया से मन्द रह कर फिर चलता है तब परस्थान आसरी जघन्य एक समय का अन्तर होता है। जब परमाणु असंख्यात काल तक दो प्रदेशी आदि स्कन्धों में रहकर फिर स्कन्ध से अलग होकर चलायमान होता है तब परस्थान आसरी उत्कृष्ट असंख्यात काल का अन्तर होता है।

परस्थान आसरी जघन्य एक समय का, उत्कृष्ट अनन्त काल का होता है।

निष्कम्प दो प्रदेशी स्कन्ध का अन्तर स्वस्थान आसरी जघन्य एक समय, उत्कृष्ट आवलिका के असंख्यातवें भाग का होता है। परस्थान आसरी जघन्य एक समय का उत्कृष्ट अनन्त काल का होता है। इसी तरह यावत् अनन्त प्रदेशी स्कन्ध तक कह देना चाहिये।

बहुत परमाणु आसरी सकम्प और निष्कम्प का अन्तर नहीं होता है। इसी तरह यावत् अनन्त प्रदेशी स्कन्ध तक कह देना चाहिये।

अल्पाबोध (अल्प बहुत्व) — सब से थोड़े सेया (सकम्प) परमाणु पुद्गल, उनसे निरेया (निष्कम्प) परमाणु पुद्गल असंख्यात गुणा। इसी तरह दो प्रदेशी स्कन्ध यावत् असंख्यात प्रदेशी स्कन्ध तक कह देना चाहिये। निरेया (निष्कम्प) अनन्त प्रदेशी स्कन्ध सब से थोड़ा, उनसे सेया (सकम्प) अनन्त प्रदेशी स्कन्ध अनन्त गुणा हैं।

अल्पाबोध – (द्रव्यार्थ रूप से) – १ सब से थोड़े द्रव्यार्थ रूप से निरेया (अकम्पमान) अनन्त प्रदेशी स्कन्ध। २ उससे सेया (सकम्प) अनन्त प्रदेशी स्कन्ध द्रव्यार्थ रूप से अनन्त गुणा। ३ उससे परमाणु पुद्गल सेया द्रव्यार्थ रूप से अनन्त गुणा। ४ उससे संख्यातप्रदेशी स्कन्ध सेया द्रव्यार्थरूपसे असंख्यात गुणा। ५ उससे असंख्यात प्रदेशी स्कन्ध सेया

द्रव्यार्थ रूप से असंख्यात गुणा । ६ उससे परमाणु पुद्गल निरेया द्रव्यार्थ रूप से असंख्यात गुणा । ७ उससे संख्यात प्रदेशी स्कन्ध निरेया द्रव्यार्थ रूप से संख्यातगुणा । ८ उससे असंख्यात प्रदेशी स्कन्ध निरेया द्रव्यार्थ रूप से असंख्यात गुणा ।

प्रदेशार्थ रूप से अल्पाबोध—जैसे द्रव्यार्थ रूप से अल्पाबोध कही वैसे ही प्रदेशार्थ रूप से अल्पाबोध कह देनी चाहिये किन्तु इतनी विशेषता है कि परमाणु पुद्गल में अप्रदेशार्थ रूप से कहना चाहिये और संख्यात प्रदेशी स्कन्ध निरेया प्रदेशार्थ रूप से असंख्यात गुणा कहना चाहिये ।

दोनों की भेली (शामिल) अल्पाबोध—सब से थोड़े अनन्तप्रदेशी स्कन्ध निरेया द्रव्यार्थ रूप से । २ उससे अनन्त प्रदेशी स्कन्ध निरेया प्रदेशार्थ रूप से अनन्त गुणा । ३ उससे अनन्त प्रदेशी स्कन्ध सेया द्रव्यार्थ रूप से अनन्त गुणा । ४ उससे अनन्त प्रदेशी स्कन्ध सेया प्रदेशार्थ रूप से अनन्त गुणा । ५ उससे परमाणु पुद्गल सेया द्रव्यार्थ रूप से अप्रदेशार्थ रूप से अनन्त गुणा । ६ उससे संख्यात प्रदेशी स्कन्ध सेया द्रव्यार्थ रूप से असंख्यात गुणा । ७ उससे संख्यात प्रदेशी स्कन्ध सेया प्रदेशार्थ रूपसे संख्यात गुणा । * ८ उससे असंख्यात प्रदेशी स्कन्ध सेया द्रव्यार्थ रूप से असंख्यात गुणा । ६ उससे

* 'संख्यात प्रदेशी स्कन्ध सेया प्रदेशार्थ रूप से असंख्यात गुणा' ऐसा भी कई प्रतियों में मिलता है ।

स्थिति जघन्य एक समय की, उत्कृष्ट आवलिका के असंख्या-
तवें भाग की है। अकम्पमान की जघन्य स्थिति एक समय की
उत्कृष्ट असंख्यात काल की है। दो प्रदेशी स्कन्ध सर्व
कम्पमान और देश से कम्पमान की स्थिति जघन्य एक समय
की है, उत्कृष्ट आवलिका के असंख्यातवें भाग की है।
अकम्पमान की स्थिति जघन्य एक समय की, उत्कृष्ट अस-
ख्याता काल की है। जिस तरह दो प्रदेशी का कहा उसी त
तीन प्रदेशी स्कन्ध यावत् अनन्त प्रदेशी स्कन्ध तक कह दे
चाहिये।

बहुत परमाणु पुद्गल कम्पमान अकम्पमान की स्थि
और बहुत दो प्रदेशी स्कन्ध यावत् अनन्त प्रदेशी स्कन्ध
सर्व से कम्पमान और देश से कम्पमान की स्थिति सर्व
(सर्व काल) शाश्वती पाई जाती है।

६—अहो भगवान्! परमाणु पुद्गल कम्पमान
अन्तर कितना है? हे गौतम! स्वकाय आसरी परकाय आ
अन्तर जघन्य एक समय का, उत्कृष्ट असंख्याता काल का
परमाणु पुद्गल अकम्पमान का अन्तर स्वकाय आसरी ज
एक समय का, उत्कृष्ट आवलिका के असंख्यातवें भाग का
परकाय आसरी जघन्य एक समय का, उत्कृष्ट असंख्याता
का है।

एक दो प्रदेशी स्कन्ध सर्व से कम्पमान और देश
कम्पमान का अन्तर स्वकाय आसरी जघन्य एक समय

उत्कृष्ट असंख्याता काल का है। परकाय आसरी जघन्य एक समय का, उत्कृष्ट अनन्त काल का है। एक दो प्रदेशी स्कन्ध अकम्पमान का अन्तर स्वकाय आसरी जघन्य एक समय का, उत्कृष्ट आवलिका के असंख्यातवें भाग का है। परकाय आसरी जघन्य एक समय का, उत्कृष्ट अनन्त काल का है। जिस तरह दो प्रदेशी स्कन्ध कहा उसी तरह तीन प्रदेशी स्कन्ध यावत् अनन्त प्रदेशी स्कन्ध तक कह देना चाहिये।

बहुत परमाणु पुद्गल कम्पमान अकम्पमान का अन्तर नहीं है। इसी तरह दो प्रदेशी स्कन्ध से लेकर यावत् अनन्त प्रदेशी स्कन्ध तक कह देना चाहिये।

अल्प बहुत्व — सब से थोड़े परमाणु पुद्गल कम्पमान, उससे अकम्पमान असंख्यात गुणा। दो प्रदेशी स्कन्ध सर्व थकी कम्पमान सब से थोड़ा; देश से कम्पमान असंख्यात गुणा, अकम्पमान असंख्यात गुणा। इसी तरह तीन प्रदेशी स्कन्ध से लेकर यावत् असंख्यात प्रदेशी स्कन्ध तक कह देना चाहिये। अनन्त प्रदेशी स्कन्ध अकम्पमान सबसे थोड़ा, उससे सर्व कम्पमान अनन्त गुणा, उससे देश कंपमान अनन्त गुणा।

परमाणु पुद्गल संख्यात प्रदेशी स्कन्ध असंख्यात प्रदेशी स्कन्ध अनन्त प्रदेशी स्कन्ध सर्व कम्पमान देश कम्पमान अकम्पमान द्रव्यार्थ की अल्प बहुत्व — १ सब से थोड़ा अनन्त प्रदेशी स्कन्ध सर्व कम्पमान द्रव्यार्थ से (दव्वट्ठयाए) २ उस से अनन्त प्रदेशी स्कन्ध अकम्पमान द्रव्यार्थ से अनन्त गुणा,

कहे गये हैं ? हे गौतम ! * आठ कहे गये हैं। इसी तरह अधर्मास्तिकाय आकाशास्तिकाय और जीवास्तिकाय के भी आठ आठ मध्य प्रदेश कहे गये हैं।

८—अहो भगवान् ! जीवास्तिकाय के ये आठ मध्य प्रदेश आकाशास्तिकाय के कितने प्रदेशों में समा सकते हैं ? हे गौतम ! जघन्य एक दो तीन चार पांच और छह में समा सकते हैं और उत्कृष्ट आठ प्रदेशों में समा सकते हैं × परन्तु सात प्रदेशों में नही समाते हैं।

सेवं भंते ! सेवं भंते !!

---

* "धर्मास्तिकायके आठ मध्य प्रदेश आठ रुचक प्रदेशवर्ती होते हैं ऐसा चूर्णिकार कहते हैं। वे रुचक प्रदेश मेरु के मूलभाग के मध्यवर्ती हैं। यद्यपि धर्मास्तिकाय आदि लोक प्रमाण हैं। इसलिए उनका मध्य भाग रुचक प्रदेशों से असंख्यात योजन दूर रत्नप्रभा के नीचे आकाश के अन्दर हैं, रुचकवर्ती नहीं हैं तथापि आकाशास्तिकाय के आठ रुचक प्रदेश दिशा और विदिशा के उत्पत्ति स्थान, हैं। इसलिये धर्मास्तिकाय आदि के भी मध्यभाग हैं, ऐसी विवक्षा की गई है, ऐसा सम्भव लगता है (टीका में)

× संकोच और विस्तार यह जीव प्रदेशों का धर्म है। इसलिए जीव के मध्यवर्ती आठ प्रदेश जघन्य एक दो तीन चार पांच छह आकाश प्रदेशों में रह सकते हैं और उत्कृष्ट आठ प्रदेशों में रहते हैं किन्तु सात आकाश प्रदेशों में कभी नहीं रहते हैं क्योंकि वस्तुस्वभाव ही ऐसा है। (टीका)

थोकड़ा नं० १८५

श्री भगवतीजी सूत्र के २५ वें शतक के ५ वें उद्देशे में काल का थोकड़ा चलता है सो कहते हैं—

१—अहो भगवान् ! क्या आवलिका संख्याता समय रूप है, असंख्यात समय रूप है या अनन्त समय रूप है ? गौतम ! आवलिका संख्यात समय रूप नहीं है, अनन्त समय रूप भी नहीं है किन्तु असंख्यात समय रूप है।

इसी तरह २ आणापाणू (श्वासोच्छ्वास), ३ थोव (स्तोक), ४ लव, ५ मुहूर्त, ६ अहोरात्रि, ७ पक्ष, ८ मास, ९ उऊ (ऋतु), १० अयण (अयन), ११ संवच्छर (संवत्सर-वर्ष), १२ जुग (युग), १३ वाससय (सौ वर्ष), १४ वास सहस्स (हजार वर्ष), १५ वास सय सहस्स (लाख वर्ष), १६ पुव्वंग (पूर्वांग), १७ पुव्व (पूर्व), १८ तुडियंग (त्रुटितांग), १९ तुडिय (त्रुटित), २० अडडंग (अटटांग), २१ अडड (अटट), २२ अववंग (अववांग), २३ अवव, २४ हूहुयंग (हूहूकांग), २५ हूहुय (हूहूक), २६ उप्पलंग (उत्पलांग), २७ उप्पल (उत्पल), २८ पउमंग (पद्मांग), २९ पउम (पद्म), ३० नलिणंग (नलिनांग), ३१ नलिण (नलिन), ३२ अच्छणिपूरंग (अच्छनिपूरांग), ३३ अच्छणिपूर (अच्छनिपूर) ३४ अउयंग (अयुतांग), ३५ अउय (अयुत), ३६ नउयंग (नयुतांग), ३७ नउय (नयुत), ३८ पउयंग (प्रयुतांग), ३९ पउय (प्रयुत), ४० चूलियंग

(चूलिकांग), ४१ चूलिय (चूलिका), ४२ सीस पहेलियंग (शीर्ष प्रहेलिकांग), ४३ सीस पहेलिया (शीर्ष प्रहेलिका), ४४ पलिओवम (पल्योपम), ४५ सागरोवमे (सागरोपम), ४६ ओसप्पिणी (अवसर्पिणी), ४७ उस्सप्पिणी (उत्सर्पिणी) तक कह देना चाहिये। ये सभी असंख्यात समय रूप हैं।

२—अहो भगवान्! क्या पुद्गल परावर्तन संख्यात समय रूप है, असंख्यात समय रूप है या अनन्त समय रूप है? हे गौतम! संख्यात समय रूप नहीं, असंख्यात समय रूप नहीं किन्तु अनन्त समय रूप है। इसी तरह भूतकाल, भविष्य काल और सर्व काल कह देना चाहिये।

३—अहो भगवान्! क्या बहुत आवलिकाएं संख्यात समय रूप हैं, असंख्यात समय रूप हैं या अनन्त समय रूप हैं? हे गौतम! संख्यात समय रूप नहीं हैं, सिय असंख्यात समय रूप हैं, सिय अनन्त समय रूप हैं। इसी तरह बहुत आणपाणू (श्वासोच्छ्वास) यावत् बहुत उत्सर्पिणी तक कह देना चाहिये।

४—अहो भगवान्! क्या बहुत पुद्गलपरावर्तन संख्यात समय रूप हैं, असंख्यात समय रूप हैं या अनन्त समय रूप हैं? हे गौतम! संख्यात समय रूप नहीं, असंख्यात समय रूप नहीं, किन्तु अनन्त समय रूप हैं। *।

* भूतकाल, भविष्य काल और सर्व काल, इनमें बहुवचन नहीं होता है। इसलिए इनमें बहुवचन आसरी प्रश्न नहीं किया गया है।

५— अहो भगवान् ! क्या आणपाणू (आनप्राण श्वासोच्छ्वास) संख्यात आवलिका रूप है, असंख्यात आवलिका रूप है या अनन्त आवलिका रूप है ? हे गौतम ! आणपाणू संख्यात आवलिका रूप है किन्तु असंख्यात और अनन्त आवलिका रूप नहीं है। इसी तरह शीर्ष प्रहेलिका तक कह देना चाहिये। पल्योपम, सागरोपम, अवसर्पिणी, उसर्पिणी इन चार बोलों में एक एक में असंख्यात आवलिका हैं। पुद्गल परावर्तन, भूतकाल, (गया काल) भविष्य काल (आनेवाला काल) और सर्व काल इन चार बोलों में एक एक में अनन्त आवलिकाएं हैं

६— अहो भगवान् ! क्या बहुत आणपाणू (आनप्राणश्वासोच्छ्वास) में संख्यात आवलिका हैं, असंख्यात आवलिका हैं या अनन्त आवलिका हैं ? हे गौतम ! सिय संख्यात, सिय असंख्यात सिय अनन्त आवलिका हैं। इसी तरह शीर्ष प्रहेलिका तक कह देना चाहिये। बहुत पल्योपम, सागरोपम, अवसर्पिणी, उत्सर्पिणी इन चार बोलों में सिय असंख्यात, सिय अनन्त आवलिका हैं। बहुत पुद्गल परावर्तन में अनन्त आवलिका हैं।

७—अहो भगवान् ! एक थोव (स्तोक) में कितने आणपाणू (आनप्राण श्वासोच्छ्वास) हैं ? हे गौतम जिस तरह आवलिका का कहा उसी तरह कह देना चाहिये यावत् शीर्ष प्रहेलिका तक कह देना चाहिये। इसी तरह एक एक बोल को छोड़

कर एक वचन आसरी और बहुवचन आसरी प्रश्नोत्तर करने चाहिये।

८—अहो भगवान्! एक पल्योपम में समय से लगाकर शीर्ष प्रहेलिका तक कितने हैं? हे गौतम! असंख्यात हैं।

९—अहो भगवान्! बहुत पल्योपम में समय से लगाकर शीर्ष प्रहेलिका तक कितने हैं? हे गौतम! सिय असंख्यात सिय अनन्त।

१०—अहो भगवान्! एक सागरोपम में पल्योपम कितने हैं? हे गौतम! संख्यात हैं। इसी तरह एक अवसर्पिणी में एक उत्सर्पिणी में पल्योपम संख्यात हैं।

११—अहो भगवान्! एक पुद्गल परावर्तन में पल्योपम कितने हैं? हे गौतम! अनन्त हैं। इसी तरह भूतकाल, भविष्य काल, सर्वकाल में भी पल्योपम अनन्त हैं।

१२—अहो भगवान्! बहुत सागरोपम में पल्योपम कितने हैं? हे गौतम! सिय संख्यात सिय असंख्यात सिय अनन्त हैं। इसी तरह अवसर्पिणी और उत्सर्पिणी में भी कह देना चाहिये। बहुत पुद्गल परावर्तन में पल्योपम अनन्त हैं।

१३—अहो भगवान्! एक अवसर्पिणी में, एक उत्सर्पिणी में सागरोपम कितने हैं? हे गौतम! संख्यात यावत् पल्योपम की तरह कह देना चाहिये।

१४—अहो भगवान्! एक पुद्गल परावर्तन में अवसर्पिणी उत्सर्पिणी कितनी हैं? हे गौतम! अनन्त हैं। इसी तरह भूत-

काल, भविष्य काल और सर्व काल कह देना चाहिये।

१५—अहो भगवान् ! बहुत पुद्गल परावर्तन में अवसर्पिणी उत्सर्पिणी कितनी हैं ? हे गौतम ! अनन्त हैं।

१६—अहो भगवान् ! भूतकाल में पुद्गल परावर्तन कितने हैं ? हे गौतम ! अनन्त हैं। इसी तरह भविष्य काल और सर्व काल में भी पुद्गल परावर्तन अनन्त हैं।

समुच्चय तीन काल के ६ अलावा (आलापक) कहे जाते हैं—१—भूतकाल से भविष्य काल एक समय अधिक है। २—भविष्य काल से भूत काल एक समय न्यून (कम) है। ३—भूतकाल से सर्व काल दुगुना झाझेरा (दुगुने से कुछ अधिक) है। ४—सर्व काल से भूत काल आधे से कुछ न्यून (कम) है। ५—भविष्य काल से सर्व काल दुगुने से कुछ न्यून (कम) है। ६—सर्व काल से भविष्य काल आधा झाझेरा (आधे से कुछ अधिक) है।

सेवं भंते ! सेवं भंते !!

थोकड़ा नं० १८६

श्री भगवतीजी सूत्र के २५ वें शतक के छठे उद्देशे में ६ नियंठा (निर्ग्रन्थ) का थोकड़ा चलता है सो कहते हैं—

द्वार गाथा

पएणवण वेद रागे कप्प चरित्त पडिसेवणा णाणे।

तित्थ लिंग सरीरे खेत्ते काल गइ संजम णिगासे ॥ १ ॥
जोगुवओग कसाए लेस्सा परिणाम बंध वेदे य।
कम्मोदीरण उवसंपजहण्ण सण्णा य आहारे ॥ २ ॥
भव आगरिसे कालंतरे य समुग्घाय खेत्त फुसणा य
भावे परिमाणे वि य अप्पा बहुयं णियंठाणं ॥ ३ ॥

अर्थ—इन तीन गाथाओं में निर्ग्रन्थों के ३६ द्वार कहे गये हैं। वे ये हैं—(१) पण्णवणा (प्रज्ञापन) द्वार, (२) वेद द्वार, (३) राग द्वार, (४) कल्प द्वार, (५) चारित्र द्वार, (६) प्रतिसेवना द्वार, (७) ज्ञान द्वार, (८) तीर्थ द्वार, (९) लिङ्ग द्वार, (१०) शरीर द्वार, (११) क्षेत्र द्वार, (१२) काल द्वार, (१३) गति द्वार, (१४) संयम द्वार, (१५) निकाश "(सन्निकर्ष) द्वार, (१६) योग द्वार, (१७) उपयोग द्वार, (१८) कषाय द्वार, (१९) लेश्या द्वार, (२०) परिणाम द्वार, (२१) बन्ध द्वार (२२) वेद (कर्मों का वेदन) द्वार, (२३) उदीरणा द्वार, (२४) उपसंपद्-हान (स्वीकार और त्याग) द्वार, (२५) संज्ञा द्वार, (२६) आहार द्वार, (२७) भव द्वार, (२८) आकर्ष द्वार (२९) काल मान द्वार, (३०) अन्तर द्वार, (३१) समुद्घात द्वार, (३२) क्षेत्र द्वार, (३३) स्पर्शना द्वार, (३४) भाव द्वार, (३५) परिमाण द्वार, (३६) अल्प बहुत्व द्वार।

(१) प्रज्ञापन द्वार—अहो भगवान्! निर्ग्रन्थ कितने प्रकार के कहे गये हैं? हे गौतम! पांच प्रकार के कहे गये हैं

* १ पुलाक, २ बकुश, ३ कुशील, ४ निर्ग्रन्थ, ५ स्नातक।

अहो भगवान् ! पुलाक के कितने भेद हैं ? हे गौतम ! पुलाक के दो भेद हैं—लब्धि पुलाक और चारित्र पुलाक (प्रतिसेवना पुलाक)।

÷लब्धि पुलाक अपनी लब्धि से चक्रवर्ती की सेना का भी विनाश कर सकता है ।

चारित्र पुलाक (प्रतिसेवना पुलाक) के ५ भेद हैं—१ × ज्ञान पुलाक, २ दर्शन पुलाक, ३ चारित्र पुलाक, ४ लिङ्ग

---

* जो बाह्य और आभ्यन्तर ग्रन्थ–परिग्रह रहित होते हैं, उन्हें निर्ग्रन्थ (साधु) कहते हैं। यद्यपि सभी साधुओं के सर्व विरति चारित्र होता है तथापि चारित्र मोहनीय कर्म के क्षयोपशमादि की विशेषता से पुलाक आदि पांच भेद होते हैं। निःसार (सार रहित) धान के दाने को पुलाक कहते हैं। उस निःसार दाने की तरह जिस साधु का संयम दोष सेवन के द्वारा कुछ असार हो गया हो उसे पुलाक कहते हैं। शाली के पूले की तरह। सार थोड़ा असार बहुत।

बकुश—जिसका चारित्र विचित्र प्रकार का हो उसे बकुश कहते हैं।

कुशील—दोषों के सेवन से जिसका शील (चारित्र) कुत्सित—मलिन हो गया हो उसे कुशील कहते हैं।

निर्ग्रन्थ—मोहनीय कर्म रहित को निर्ग्रन्थ कहते हैं।

स्नातक—चार घाती कर्म रहित को स्नातक कहते हैं।

÷इस सम्बन्ध में कुछ आचार्यों का मत यह है कि विराधना से जो ज्ञान पुलाक होते हैं उन्हीं को ऐसी लब्धि प्राप्त होती है वे ही लब्धि पुलाक कहलाते हैं। इनके सिवाय दूसरा कोई लब्धि पुलाक नहीं होता है।

× प्रतिसेवना पुलाक की अपेक्षा पुलाक के पांच भेद हैं—ज्ञान की विराधना करने वाला ज्ञानपुलाक कहलाता है। जो शंका आदि

पुलाक, ५ यथासूक्ष्म पुलाक।

अहो भगवान! वकुश के कितने भेद हैं? हे गौतम! वकुश के ५ भेद हैं—१ ÷ आभोग वकुश, २ अनाभोग वकुश, ३ संवुड (संवृत) वकुश, ४ असंवुड (असंवृत) वकुश, ५ यथासूक्ष्म वकुश।

अहो भगवान्! कुशील के कितने भेद हैं? हे गौतम! कुशील के दो भेद—* प्रतिसेवना कुशील और कषाय कुशील।

दूषणों से दर्शन (समकित) को दूषित करता है उसे दर्शनपुलाक कहते हैं। मूलगुण और उत्तर गुण की विराधना से जो चारित्र को दूषित करता है उसे चारित्र पुलाक कहते हैं। विना कारण जो अन्य लिङ्ग को धारण करता है उसको लिङ्ग पुलाक कहते हैं। जो मन से अकल्पनीय वस्तु को सेवन करने की इच्छा करता है उसे यथासूक्ष्म पुलाक कहते हैं।

÷ वकुश के दो भेद हैं—उपकरण वकुश और शरीर वकुश। जो वस्त्र पात्रादि उपकरण की विभूषा करता हो उसे उपकरण वकुश कहते हैं। जो अपने हाथ पैर नख, मुख आदि शरीर के अवयवों को सुशोभित रखता हो उसे शरीर वकुश कहते हैं। इन दोनों प्रकार के वकुशों के फिर पांच भेद हैं—शरीर उपकरण आदि की विभूषा करना साधु के लिए वर्जित है ऐसा जानते हुए भी जो दोष लगाता है उसे आभोग वकुश कहते हैं और जो अनजान में दोष लगाता है उसे अनाभोग वकुश कहते हैं। जो छिपकर दोष लगाता है उसे संवुड (संवृत) वकुश कहते हैं और जो प्रकट में दोष लगाता है उसे असंवुड (असंवृत) वकुश कहते हैं। आंख और मुख को जो साफ करता है उसे यथासूक्ष्म वकुश कहते हैं।

* मूलगुण व उत्तर गुण की विराधना से जिसका चारित्र कुशील (दूषित) हो उसको प्रतिसेवना कुशील कहते हैं। संज्वलन कषाय के द्वारा जिसका चारित्र दूषित हो उसको कषायकुशील कहते हैं।

अहो भगवान ! प्रतिसेवना कुशील के कितने भेद हैं ? हे गौतम ! पांच भेद हैं— × ज्ञान प्रतिसेवना कुशील, दर्शन प्रतिसेवना कुशील, चारित्र प्रतिसेवना कुशील, लिङ्ग प्रतिसेवना कुशील और यथासूक्ष्म प्रतिसेवना कुशील।

अहो भगवान् ! कषायकुशील के कितने भेद हैं ? हे गौतम ! पांच भेद हैं —* ज्ञानकषायकुशील, दर्शनकषायकुशील, चारित्र कषाय कुशील, लिङ्ग कषाय कुशील, यथा सूक्ष्म कषाय कुशील।

अहो भगवान् ! निर्ग्रन्थ के कितने भेद हैं। हे

× ज्ञान, दर्शन, चारित्र और लिङ्ग द्वारा जो आजीविका करता हो उसको क्रमशः ज्ञान प्रतिसेवना कुशील, दर्शन प्रतिसेवना कुशील, चारित्र प्रतिसेवना कुशील और लिङ्गप्रतिसेवना कुशील कहते हैं। 'यह तपस्वी है' इत्यादि शब्द सुन कर जो खुश हो या तपस्या के फल की इच्छा करे, देवादि पद की इच्छा करे उसे यथासूक्ष्मप्रतिसेवनाकुशील कहते हैं।

* जो क्रोध मान आदि कषायों के उदय से परिणामों में ऊँच नीच होने से ज्ञान दर्शन और चारित्र में दोष लगाता है उसे क्रमशः ज्ञान कषाय कुशील, दर्शनकषायकुशील और चारित्रकषायकुशील कहते हैं। जो कषाय पूर्वक वेष परिवर्तन करे उसे लिङ्ग कषाय कुशील कहते हैं। जो मन से क्रोधादि का सेवन करता है उसको यथासूक्ष्म कषाय कुशील कहते हैं। अथवा जो मन से कषाय द्वारा ज्ञान आदि की विराधना करता है उसको क्रमशः ज्ञान कषायकुशील दर्शनकषायकुशील आदि कहते हैं। मूल गुण उत्तर गुणमें ये दोष नहीं लगाते।

गौतम ! पांच भेद हैं—* प्रथम समयवर्ती निर्ग्रन्थ, अप्रथम समयवर्ती निर्ग्रन्थ, चरम समयवर्ती निर्ग्रन्थ, अचरम समयवर्ती निर्ग्रन्थ और यथासूक्ष्म निर्ग्रन्थ (सब समय सरीखा वर्ते)।

अहो भगवान् ! स्नातक के कितने भेद हैं ? हे गौतम ! ÷ स्नातक के ५ भेद हैं—१ अच्छवी (शरीर की शुश्रूषा-विभूषा रहित) २ अशवल (असबले) (दोष रहित-शुद्ध चारित्र वाला) ३ अकर्मांश (अकम्मंसे) (घाती कर्म रहित)। ४ संसुद्ध नाण दंसण धरे अरहा जिने केवली (संशुद्ध ज्ञान-दर्शन के धारक अरिहन्त जिन केवली) ५ अपरिस्रावी (अपरिस्सावी) (योग-क्रिया रहित होने से कर्म बन्ध रहित)।

---

* ग्यारहवां गुणस्थान उपशान्त मोहनीय और बारहवां गुणस्थान क्षीण मोहनीय, इनकी स्थिति अन्तमुहूर्त प्रमाण है। इनके प्रथम समय में रहने वाला प्रथम समयवर्ती निर्ग्रन्थ कहलाता है। और बाकी के समयों में रहने वाला अप्रथम समयवर्ती निर्ग्रन्थ कहलाता है। इसी तरह उपरोक्त दोनों गुणस्थानों के चरम (अन्तिम) समय में रहने वाला चरमसमयवर्ती और बाकी समयों में रहने वाला अचरम समयवर्ती निर्ग्रन्थ कहलाता है।

प्रथम आदि समयों की विवक्षा किये बिना सामान्यतः निर्ग्रन्थ को यथासूक्ष्म निर्ग्रन्थ कहते हैं। इनके लिये सब समय सरीखे हैं।

÷ किसी भी टीकाकार ने कहीं भी स्नातक के अवस्था कृत भेदों की व्याख्या नहीं की है। इसलिए इन्द्र शक्र पुरन्दर शब्दों की तरह इनका भी शब्दनय की अपेक्षा से भेद होता है, ऐसा संभव है। (टीका)

२ वेद द्वार—अहो भगवान् ! पुलाक आदि पांचों प्रकार के निर्ग्रन्थ क्या सवेदी होते हैं या अवेदी ? हे गौतम ! पुलाक, बकुश और प्रतिसेवनाकुशील ये * सवेदी होते हैं। पुलाक में दो वेद पाये जाते हैं—पुरुष वेद और × पुरुष नपुंसक वेद। बकुश और प्रतिसेवना कुशील में तीनों ही वेद पाये जाते हैं। + कषाय कुशील सवेदी भी होता है और अवेदी भी होता है। सवेदी होता है तो तीनों वेद पाये जाते हैं। अवेदी होता है तो उपशान्तवेदी या क्षीणवेदी होता है।

निर्ग्रन्थ और स्नातक अवेदी होते हैं। निर्ग्रन्थ उपशान्तवेदी अथवा क्षीणवेदी होता है और स्नातक क्षीणवेदी होता है।

३ राग द्वार—अहो भगवान् ! क्या पुलाक सरागी होता

---

* पुलाक, बकुश और प्रतिसेवना कुशील उपशम श्रेणी या क्षपक श्रेणी नहीं कर सकते हैं इसलिये ये अवेदी नहीं हो सकते हैं।

× स्त्री को पुलाक लब्धि नहीं होती है परन्तु पुलाक लब्धि वाला पुरुष अथवा पुरुष नपुंसक होता है। जो पुरुष होते हुए भी लिङ्ग छेदादि द्वारा कृत्रिम नपुंसक होता है उसे पुरुष नपुंसक जानना चाहिये किन्तु स्वभाव से (स्वरूप से) नपुंसक वेद पुलाक लब्धि वाला नहीं होता है।

+ कषाय कुशील सूक्ष्म संपराय गुणस्थानक तक होता है। वह प्रमत्त, अप्रमत्त, अपूर्वकरण और अनिवृत्तिबादर में सवेदी होता है। सूक्ष्म सम्पराय में उपशान्तवेदी या क्षीणवेदी होता है तब वह अवेदक होता है।

है या वीतरागी होता है ? हे गौतम ! सरागी होता हैं, वीतरागी नहीं होता है। इसी तरह बकुश और कुशील (प्रतिसेवना, कषायकुशील) भी सरागी होते हैं, वीतरागी नहीं। निर्ग्रन्थ और स्नातक वीतरागी होते हैं, सरागी नहीं निर्ग्रन्थ उपशान्तकषाय वीतरागी होता है अथवा क्षीणकषाय वीतरागी होता है। स्नातक क्षीणकषाय वीतरागी होता है।

४ कल्प द्वार—अहो भगवान् ! कल्प के कितने भेद हैं ? हे गौतम ! कल्प के ५ भेद हैं—१ स्थित कल्प, २ अस्थित कल्प, ३ स्थविर कल्प, ४ जिन कल्प, ५ कल्पातीत।

पुलाक में तीन कल्प पाये जाते हैं (* स्थित कल्प, अस्थित कल्प और स्थविर कल्प)। बकुश और प्रतिसेवना कुशील में पहले के चार कल्प पाये जाते हैं। कषाय कुशील में ५, निर्ग्रन्थ और स्नातक में तीन (स्थित कल्प, अस्थित कल्प, कल्पातीत) कल्प पाये जाते हैं।

५ चारित्र द्वार—अहो भगवान् ! चारित्र कितने हैं ? हे गौतम ! चारित्र ५ हैं—१ सामायिक चारित्र, २छेदोपस्था-

---

* प्रथम और अन्तिम तीर्थङ्कर के साधुओं में 'अचेल कल्प' आदि दस कल्प होते हैं। क्योंकि उन्हें उनका पालन करना आवश्यक होता है। इसलिए वे स्थित कल्प में होते हैं। बीच के बाईस तीर्थङ्करों के साधु कभी कल्प में स्थित होते हैं और कभी स्थित नहीं होते क्योंकि कल्प का पालन करना उनके लिए आवश्यक नहीं है। इसलिए वे अस्थितकल्प वाले होते हैं।

पनीय चारित्र, ३ परिहार विशुद्ध चारित्र, ४ सूक्ष्म सम्पराय चारित्र, ५ यथाख्यात चारित्र।

छद्मस्थ तीर्थङ्कर सकषायी भी होते हैं। इसलिए कषायकुशील में कल्पातीतपना पाया जा सकता है।

निर्ग्रन्थ और स्नातक में जिनकल्प और स्थविरकल्प के धर्म नहीं होते। इसलिए ये दोनों कल्पातीत ही होते हैं। (टीका)।

दस कल्प ये हैं—१ अचेल कल्प, २ औद्देशिक कल्प, ३ राजपिण्ड, ४ शय्यातर, ५ मासकल्प, ६ चतुर्मासकल्प, ७ व्रत, ८ प्रतिक्रमण, ९ कृतिकर्म, १० पुरुष ज्येष्ठ।

दस कल्प इस प्रकार हैं—

(१) अचेल कल्प—पहले व चौवीसवें तीर्थङ्कर के साधुओं के सफेद रंग के वस्त्र रखने का कल्प है। ये वस्त्र कम कीमत के होते हैं तथा सीमित परिमाण में रखे जाते हैं। शेष बाबीस तीर्थंकर के साधु पाँच वर्णों के वस्त्र आवश्यकतानुसार रख सकते हैं।

(२) औद्देशिक कल्प—पहले व चौवीसवें तीर्थंकर के साधु का अन्य संभोगी साधु के निमित्त से बनाया हुआ आहार दूसरे साधु के नहीं लेने का कल्प है यदि लेवे तो औद्देशिक दोष लगे। शेष बाबीस तीर्थंकर के साधु उक्त औद्देशिक आहार ले सकते हैं।

(३) राजपिण्ड—पहले व चौवीसवें तीर्थंकर के साधु का राजपिण्ड—यानी राजा के वास्ते बनाया हुआ आहार—नहीं

लेने का कल्प है। शेष बावीस तीर्थंकर के साधु राज पिण्ड ले सकते हैं।

(४) शय्यातर—चौवीस तीर्थंकरों के साधुओं का शय्यातर के यहाँ से आहार नहीं लेने का कल्प है।

(५) मास कल्प— पहले व चौवीसवें तीर्थंकर के साधुओं के लिए नव कल्पी विहार बताया गया है। शेष बावीस तीर्थंकरों के साधुओं के लिये नव कल्पी विहार नहीं बताया गया है। ये अपनी इच्छानुसार विहार करते हैं।

(६) चतुर्मास कल्प—पहले व चौवीसवें तीर्थंकर के साधु का वर्षा काल में चार महीने एक स्थान पर रहने का कल्प है। बावीस तीर्थंकर के साधुओं का वर्षाकाल में ७० दिन एक स्थान पर रहने का कल्प है। पहले वर्षा हो जाने से पाप लगने का अंदेशा हो तो अधिक भी रह सकते हैं।

(७) व्रत—पहले व चौवीसवें तीर्थंकर के साधु के लिये पाँच महाव्रत और छठा रात्रि भोजन त्याग का कल्प है। बावीस तीर्थंकरों के साधुओं के लिये चार महाव्रत व पाँचवे रात्रि भोजन त्याग का कल्प है।

(८) प्रतिक्रमण—पहले व चौवीसवें तीर्थंकर के साधु के लिये देवसिय, राइसिय, पक्खी, चौमासी व संवत्सरी—ये पाँच प्रतिक्रमण करने का कल्प है। बावीस तीर्थंकरों के

पुलाक, बकुश और प्रतिसेवना कुशील में पहले के दो चारित्र पाये जाते हैं। कषाय कुशील में पहले के चार चारित्र

साधुओं के लिये चौमासी व संवत्सरी का प्रतिक्रमण करना आवश्यक है। शेष प्रतिक्रमण पाप लगे तो करते हैं अन्यथा नहीं करते।

(९) कृतिकर्म—चौवीस तीर्थंकरों के साधुओं के लिये यह कल्प है कि छोटी दीक्षा वाले साधु बड़ी दीक्षा वालों को वंदना नमस्कार करते हैं उनका गुणग्राम करते हैं।

(१०) पुरुष ज्येष्ठ—चौवीस ही तीर्थंकरों के लिये यह कल्प है कि पुरुष की प्रधानता होने से चाहे सौ वर्ष की दीक्षित साध्वी हो तो भी वह नवदीक्षित साधु को वंदना नमस्कार करती है।

चूँकि पहले तीर्थंकर के साधु ऋजु जड़ होते हैं और अन्तिम तीर्थंकर के साधु वक्र जड़ होते हैं तथा शेष बावीस तीर्थङ्कर के साधु ऋजु प्रज्ञ होते हैं। इसी कारण पहले व चौबीसवें तीर्थङ्कर के साधुओं के कल्प में और शेष बावीस तीर्थङ्करों के साधुओं के कल्प में अन्तर है।

पहले और अन्तिम तीर्थङ्कर के साधुओं में दस ही कल्प नियमा होते हैं। बीचके २२ तीर्थङ्करों के साधुओं में चार कल्प (चौथा, सातवां, नवां, दसवां) की नियमा और छह कल्प की भजना होती है।

शास्त्रोक्त मर्यादानुसार वस्त्र पात्रादि रखना स्थविरकल्प है। जघन्य उत्कृष्ट १२ उपकरण रखना जिन कल्प है।

अरिहन्त, केवली, तीर्थंङ्कर कल्पातीत होते हैं।

गृहस्थ लिंग में होता है। भाव लिंग की अपेक्षा स्वलिङ्ग में होता है। इसी तरह बकुश, प्रतिसेवना कुशील, कषाय कुशील, निर्ग्रन्थ और स्नातक का कह देना चाहिये।

१०—शरीर द्वार—अहो भगवान्! पुलाक कितने शरीरों में होता है? हे गौतम! पुलाक औदारिक, तैजस, कार्मण इन तीन शरीरों में होता है। इसी तरह निर्ग्रन्थ और स्नातक का भी कह देना चाहिये। बकुश, और प्रतिसेवनाकुशील औदारिक वैक्रिय तैजस कार्मण इन चार शरीरों में होता है। कषाय-कुशील पांच शरीरों में होता है।

११— क्षेत्र द्वार—अहो भगवान्! पुलाक कर्मभूमि में होता है या अकर्मभूमि में? हे गौतम! पुलाक * जन्म और

रजोहरण आदि द्रव्य स्वलिङ्ग है परलिंग के दो भेद हैं—कुतीर्थिक लिङ्ग और गृहस्थ लिंग। पुलाक तीनों प्रकार के द्रव्य लिंग में होता है क्योंकि चारित्र का परिणाम किसी भी द्रव्य लिंग की अपेक्षा नहीं रखता है। (टीका)।

* जन्म (उत्पत्ति) और सद्भाव (चारित्र भाव का अस्तित्व) की अपेक्षा पुलाक कर्मभूमि में ही होता है अर्थात् कर्मभूमि में ही जन्मता है और वहीं विचरता है, किन्तु अकर्मभूमि में उत्पन्न नहीं होता है क्योंकि अकर्म भूमि में उत्पन्न हुए जीव को चारित्र नहीं आता है। संहरण (साहरण) की अपेक्षा भी पुलाक अकर्मभूमि में नहीं होता है क्योंकि देवता पुलाक लब्धि वाले का साहरण नहीं कर सकते हैं। नौ बोलों का साहरण नहीं होता है—पुलाक, आहारक-लब्धि, साध्वी, अप्रमादी, उपशम श्रेणी, क्षपक श्रेणी, परिहार विशुद्धि चारित्र वाले, चौदह पूर्वधारी और केवलज्ञानी।

सद्भाव की अपेक्षा कर्मभूमि में होता है, अकर्मभूमि में नहीं होता है। बकुश जन्म की अपेक्षा कर्मभूमि में होता है अकर्मभूमि में नहीं होता है, किन्तु संहरण (साहरण) की अपेक्षा कर्मभूमि में भी सद्भाव होता है और अकर्मभूमि में भी होता है। इसी तरह कुशील (कषाय कुशील और प्रतिसेवना कुशील) निर्ग्रन्थ और स्नातक का भी कह देना चाहिये।

१२ काल द्वार—अहो भगवान्! क्या पुलाक * अवसर्पिणी काल, उत्सर्पिणी काल या नो अवसर्पिणी नो उत्सर्पिणी काल में होता है? हे गौतम! उपरोक्त तीनों काल में होता है। अहो भगवान्! पुलाक अवसर्पिणी के कौन से आरे में होता है? हे गौतम! + जन्म की अपेक्षा तीसरे चौथे आरे में होता है और सद्भाव आसरी तीसरे चौथे पांचवें आरे में होता है।

---

* भरत और ऐरावत क्षेत्र में अवसर्पिणी और उत्सर्पिणी ये दो काल होते हैं और महाविदेह तथा हैमवत आदि क्षेत्रों में नो अवसर्पिणी नो उत्सर्पिणी काल होता है।

+पुलाक अवसर्पिणी काल के चौथे आरे में जन्मा हुआ हो तो पांचवें आरे में उसका सद्भाव हो सकता है। तीसरे चौथे आरे में जन्म और सद्भाव दोनों हो सकते हैं। उत्सर्पिणी काल में जन्म की अपेक्षा दूसरे तीसरे चौथे आरे में होता है। दूसरे आरे के अन्त में, जन्म लेकर तीसरे आरे में चारित्र स्वीकार करता है। तीसरे चौथे आरे में जन्म और सद्भाव दोनों होते हैं। सद्भाव की अपेक्षा तीसरे चौथे आरे में ही होता है क्योंकि इन्हीं दो आरों में चारित्र की प्राप्ति होती है।

जिस तरह पुलाक का कहा उसी तरह निर्ग्रन्थ और स्नातक का भी कह देना चाहिये । बकुश, प्रतिसेवना कुशील और कषाय कुशील जन्म और सद्भाव (प्रवृत्ति) की अपेक्षा तीसरे चौथे पांचवें आरे में होते हैं । उत्सर्पिणी काल में छहों नियंठा जन्म आसरी दूसरे, तीसरे, चौथे आरे में होतेहैं और सद्भाव (प्रवृत्ति) आसरी तीसरे चौथे आरे में होते हैं । साहरण आसरी पुलाक का साहरण नहीं होता है । शेष * पांच नियंठ साहरण आसरी छहों आरे और चारों पलिभाग (देवकुरु, उत्त कुरु, हरिवास, रम्यकवास, हेमवय ऐरण्यवय, महाविदेह क्षेत्र) में पाये जाते हैं । नो अवसर्पिणी नो उत्सर्पिणी आसरी छहं नियंठा जन्म की अपेक्षा चौथे पलिभाग यानी महाविदेह क्षेत्र में होते हैं और साहरण आसरी पुलाक को छोड़कर पाँचों ह नियंठा छहों आरे और चारों पलिभाग में पाये जाते हैं ।

१३—गति द्वार—अहो भगवान् ! पुलाक आदि नियंठ मरकर कहाँ उत्पन्न होते हैं ? हे गौतम ! पुलाक मरकर जघन्य

---

* साहरण आसरी निर्ग्रन्थ और स्नातक का छहों आरे और चा पलिभाग में सद्भाव कहा है । इसका अभिप्राय यह है कि पहले साहरण किये हुए मुनि को निर्ग्रन्थपन और स्नातकपन की प्राप्ति होती है इस अपेक्षा से यह समझना चाहिये । वैसे वेद रहित मुनि का साहरण नहीं होता है । कहा भी है— भगणी (साध्वी), वेद रहित, परिहार विशुद्ध, पुलाक लब्धिवाला, अप्रमत्त, चौदह पूर्वधारी और आहारक लब्धिवाले का साहरण नहीं होता है । (टीका)

पहले देवलोक में, उत्कृष्ट आठवें देवलोक में जाता है। स्थिति जघन्य प्रत्येक पल की उत्कृष्ट १८ सागर की होती है। यदि आराधक हो तो चार (इन्द्र,सामानिक, तायत्तीसग (त्रायस्त्रिंश), लोकपाल) पदवियों में से कोई एक पदवी पाता है।

बकुश और प्रतिसेवना कुशील मरकर जघन्य पहले देवलोक में, उत्कृष्ट बारहवें देवलोक में जाते हैं। स्थिति जघन्य प्रत्येक पल (दो पल्योपम से लेकर नौ पल्योपम तक) की, उत्कृष्ट २२ सागर की होती है। यदि आराधक हो तो उपरोक्त चार पदवियों में से कोई एक पदवी पाता है।

कषाय कुशील मरकर जघन्य पहले देवलोक में, उत्कृष्ट सर्वार्थसिद्ध विमान में जाता है। स्थिति जघन्य प्रत्येक पल की, उत्कृष्ट ३३ सागर की होती है। यदि आराधक होवे तो पांच (इन्द्र, सामानिक, तायत्तीसग, (त्रायस्त्रिंश) लोकपाल, अहमिन्द्र) पदवियों में से कोई एक पदवी पाता है।

निर्ग्रन्थ मरकर सर्वार्थसिद्ध में जाता है। स्थिति ३३ सागर की होती है। और एक अहमिन्द्र की पदवी पाता है।

उपरोक्त पांच नियंठा (पुलाक, बकुश,प्रतिसेवना कुशील, कषायकुशील, निर्ग्रन्थ) यदि * विराधक होवें तो कोई पदवी नहीं पाते हैं, सामान्य देव होते हैं।

---

* पाँच नियण्ठा विराधक की अपेक्षा 'अन्नयरेसु' यानी दूसरे ठिकानों में उत्पन्न हो सकते हैं ऐसा बतलाया गया है। इसका खुलासा इस प्रकार है :—

स्नातक मरकर मोक्ष में जाता है। स्नातक आराधक ही होता है, विराधक नहीं होता है।

पहले चार नियण्ठों ने पहले आयुष्य बाँध लिया हो तो भवनपति आदि ठिकानों में उत्पन्न हो सकते हैं अथवा इन्द्रादि की पदवी न पाकर अन्य वैमानिक देवों में उत्पन्न हो सकते हैं। कषायकुशील अप्रतिसेवी होते हैं वे मूल गुण उत्तर गुण में दोष नहीं लगाते हैं। इनमें तीर्थङ्कर देव तो उत्कृष्ट कषायकुशील होते हैं तथा वे कल्पातीत होते हैं इसलिये वे तो विराधक होते ही नहीं। सामान्य साधुओं में जो कषाय कुशील होते हैं वे भी मूल गुण उत्तर गुण के विराधक नहीं होते। परन्तु कषाय के उदय से परिणामों की धारा में उतार चढ़ाव होने से विराधक हो सकते हैं। इस प्रकार कषाय कुशील पहले आयुष्य का बंध हो जाने से तथा ऊपर लिखे अनुसार विराधक होने से दूसरे ठिकानों में उत्पन्न हो सकते हैं। निर्ग्रन्थ नियण्ठा निर्ग्रन्थ अवस्था में तो विराधक हो ही नहीं सकता। उनके परिणाम वर्द्धमान अवट्ठिया होते हैं तथा वे अजघन्य अनुत्कृष्ट ३३ सागरोपम की आयु वाले अनुत्तर विमान में ही उत्पन्न होते हैं दूसरे स्थान में नहीं। इनका अन्यतर स्थान में उत्पन्न होना इस प्रकार संभव है कि उपशम श्रेणी में जो निर्ग्रन्थ होते हैं वे उपशम श्रेणी की स्थिति पूरी होने पर नीचे गुण स्थानों में आते हैं तब निर्ग्रन्थावस्था छोड़कर दूसरे नियण्ठे में आ सकते हैं और उस समय दूसरे ठिकानों की स्थिति बांध सकते हैं। इन्हें भूत नय की अपेक्षा से निर्ग्रन्थ मान कर निर्ग्रन्थ का दूसरे स्थानों में जाना बताया गया है ऐसा संभव है। तत्त्व केवली गम्य।

१४-संयमस्थान—अहो भगवान् ! पुलाक के * संयम-स्थान कितने हैं ? हे गौतम ! असंख्याता हैं। इसी तरह बकुश, प्रतिसेवना कुशील और कषाय कुशील का कह देना चाहिये। निर्ग्रन्थ और स्नातक के संयम स्थान एक है।

इनकी अल्पाबहुत्व इस प्रकार है—सब से थोड़े निर्ग्रन्थ और स्नातक के संयम स्थान क्योंकि इनका संयम स्थान एक

प्रश्न—पांचशरीर और छः समुद्घात कषाय कुशील के होते हैं फिर उन्हें अप्रतिसेवी-मूल गुण उत्तर गुण का अविराधक कैसे कहा है ?

उत्तर-वीतरागके पैरोंके नीचे जीव आजावे तो उन्हें इरियावही बन्ध होना कहा गया और सरागी को इस क्रिया से संपराय बंध होना बतलाया है। क्रिया एकसी होते हुए भी भेद का कारण यह है कि वीतराग के परिणाम बहुत ऊँचे होते हैं। इसी प्रकार परिणामों की अतिशय शुद्धता के कारण कषायकुशील को ५ शरीर और ६ समुद्घात होते हुए भी अप्रतिसेवी कहा गया है।

* संयम—अर्थात् चारित्र की शुद्धि अशुद्धि की हीनाधिकता के कारण होने वाले भेदों को संयमस्थान कहते हैं। वे असंख्याता होते हैं। उनमें प्रत्येक संयमस्थान के सर्वाकाश प्रदेश गुणित (गुणा करे) सर्वाकाश प्रदेश प्रमाण (अनन्तानन्त) पर्याय (अंश) होते हैं। वे संयमस्थान पुलाक के असंख्यात होते हैं क्योंकि चारित्रमोहनीय का क्षयोपशम विचित्र होता है। इसी तरह बकुश, प्रतिसेवना कुशील और कषायकुशील का भी कह देना चाहिये। कषाय का अभाव होने से निर्ग्रन्थ और स्नातक के एक ही संयम स्थान होता है।

ही है। उससे पुलाक के संयमस्थान असंख्यात गुणा, उससे बकुश के संयमस्थान असंख्यात गुणा, उससे प्रतिसेवना कुशील के संयम स्थान असंख्यात गुणा, उससे कषायकुशील के संयम स्थान असंख्यात गुणा हैं।

१५–निकास द्वार * (संनिकर्ष द्वार)—अहो भगवान्! पुलाक के कितने चारित्रपर्याय होते हैं? हे गौतम! अनन्त होते हैं। इसी तरह यावत् स्नातक तक कह देना चाहिये। अहो भगवान्! एक पुलाक दूसरे पुलाक के चारित्र पर्यायों की अपेक्षा हीन, अधिक, तुल्य होता है? हे गौतम! पुलाक पुलाक आपसमें ÷ छट्ठाण वडिया है। कषाय कुशील के साथ में भी छट्ठाण वडिया है। बकुश, प्रतिसेवनाकुशील, निर्ग्रन्थ और स्नातक से अनन्तगुण हीन (अनन्तवें भाग) है।

एक बकुश दूसरे बकुश के साथ में (आपस में) छट्ठाण वडिया है, प्रतिसेवना कुशील और कषायकुशील से छट्ठाण वडिया है, पुलाक से अनन्त गुण अधिक है, निर्ग्रन्थ और

---

* चारित्र की पर्यायों को निकर्ष कहते हैं। पुलाक आदि का अपने स्वजातीय पुलाक आदि के साथ संयोजन (मिलान) करना स्वस्थान संनिकर्ष कहलाता है।

÷ अनन्त भाग हीन, असंख्यात भाग हीन, संख्यात भाग हीन, अनन्त गुण हीन, असंख्यात गुण हीन, संख्यात गुण हीन। इसको 'छट्ठाण वडिया' कहते हैं। यह हीनता की अपेक्षा से छट्ठाण वडिया है। इसी तरह 'वृद्धि' की अपेक्षा से भी 'छट्ठाण वडिया' कह देना चाहिये।

स्नातक से अनन्त गुण हीन है ।

प्रतिसेवन। कुशील प्रतिसेवना कुशील से छट्ठाण वडिया है। बकुश से छट्ठाण वडिया और कषाय कुशील से छट्ठाण वडिया है। पुलाक से अनन्त गुण अधिक और निर्ग्रन्थ स्नातक से अनन्तगुण हीन है।

एक कषाय कुशील दूसरे कषाय कुशील के साथ आपस में छट्ठाण वडिया है, पुलाक, बकुश और प्रतिसेवना कुशील से छट्ठाण वडिया है, निर्ग्रन्थ और स्नातक से अनन्तगुण हीन है।

निर्ग्रन्थ और स्नातक आपस में तुल्य हैं। पुलाक, बकुश और कषाय कुशील और प्रतिसेवना कुशील से अनन्त गुण अधिक हैं।

अल्प बहुत्व—सब से थोड़े पुलाक और कषायकुशील के जघन्य चारित्र के पर्याय, उससे पुलाक के उत्कृष्ट चारित्र के पर्याय अनन्त गुणा, उससे बकुश और प्रतिसेवना कुशील के जघन्य चारित्र के पर्याय परस्पर तुल्य अनन्त गुणा, उससे बकुश के उत्कृष्ट चारित्र के पर्याय अनन्त गुणा, उससे प्रतिसेवना कुशील के उत्कृष्ट चारित्र के पर्याय अनन्त गुणा, उससे कषाय कुशील के उत्कृष्ट चारित्र के पर्याय अनन्त गुणा, उससे निर्ग्रन्थ और स्नातक के चारित्र के पर्याय परस्पर तुल्य अनन्त गुणा।

१६ योग द्वार— अहो भगवान्! पुलाक सयोगी होता है या अयोगी होता है? हे गौतम! सयोगी (मन योगी,

वचन योगी, काय योगी) होता है। अयोगी नहीं होता है। इसी तरह बकुश, प्रतिसेवना कषाय कुशील और निर्ग्रन्थ का कह देना चाहिये। स्नातक सयोगी और अयोगी दोनों होता है।

१७ उपयोग द्वार—अहो भगवान्! पुलाक साकार (ज्ञान) उपयोग वाला होता है या अनाकार (दर्शन) उपयोग वाला होता है? हे गौतम! साकार उपयोग वाला भी होता है और अनाकार उपयोग वाला भी होता है। इसी तरह बकुश, प्रतिसेवना, कषाय कुशील, निर्ग्रन्थ और स्नातक का कह देना चाहिये।

१८ कषाय द्वार—अहो भगवान्! पुलाक सकषायी होता है या अकषायी होता है? हे गौतम! सकषायी होता है, उसमें क्रोध, मान, माया, लोभ ये चारों कषाय पाये जाते हैं। इसी तरह बकुश और प्रतिसेवना कुशील का कह देना चाहिये। कषाय कुशील सकषायी होता है। उसमें * चार या तीन या दो या एक कषाय पाये जाते हैं। निर्ग्रन्थ अकषायी (उपशान्त कषायी या क्षीण कषायी) होता है। स्नातक अकषायी

* उपशम श्रेणी या क्षपक श्रेणी में क्रोध का उपशम या क्षय हो तो तीन कषाय पाये जाते हैं। मान का उपशम या क्षय हो तो दो कषाय पाये जाते हैं। जब माया का उपशम या क्षय होता है तो सूक्ष्म-सम्पराय नामक दसवें गुणस्थान में एक संज्वलन का लोभ पाया जाता है।

(क्षीण कषायी) होता है।

१६—लेश्या द्वार—अहो भगवान् ! पुलाक लेश्या वाला होता है या लेश्या रहित होता है ? हे गौतम ! पुलाक लेश्या वाला होता है, किन्तु लेश्या रहित नहीं होता है। उसमें तेजो-लेश्या, पद्म लेश्या और शुक्ल लेश्या ये तीन विशुद्ध लेश्या होती हैं। इसी तरह बकुश और प्रतिसेवना कुशील का भी कह देना चाहिये।

कषायकुशील में × छहों लेश्या पाई जाती हैं। निर्ग्रन्थ में एक परम शुक्ल लेश्या पाई जाती है। स्नातक सलेशी भी होता है और अलेशी भी होता है। यदि सलेशी होता है तो एक * परम शुक्ल पाई जाती है।

२०—परिणाम—अहो भगवान् ! पुलाक में कौन सा

×यहाँ जो छः लेश्या बताई हैं वे द्रव्य लेश्या की अपेक्षा से हैं। भगवति शतक १ उद्देशा १ में प्रमत्त अप्रमत्त साधु में पहली तीन लेश्या का निषेध किया है और टीका में स्पष्टीकरण दिया है कि कहीं कहीं साधुओं के छः लेश्या होने का जो उल्लेख है वह द्रव्य लेश्या की अपेक्षा से समझना चाहिये।

* जब जीव में शुक्लध्यान का तीसरा भेद पाया जाता है, उस समय परमशुक्ल लेश्या होती है, बाकी समय शुक्ल लेश्या होती है किंतु वह दूसरे जीवों की शुक्ललेश्या की अपेक्षा तो परम शुक्ल लेश्या ही होती है।

परिणाम होता है ? + हीयमान, वर्द्धमान-या अवट्ठिया (अव स्थित) ? हे गौतम ! उपरोक्त तीनों परिणाम पाये जाते हैं। इसी तरह बकुश, प्रतिसेवना कुशील और कषाय कुशील में भी तीनों परिणाम पाये जाते हैं। हीयमान वर्द्धमान की स्थिति जघन्य एक समय की, उत्कृष्ट अन्तर्मुहूर्त की होती है। अवट्ठिया (अवस्थित) की स्थिति जघन्य एक समय की, उत्कृष्ट ७ समय की होती है। निर्ग्रन्थ में * वर्द्धमान (वड्ढमाण और अवट्ठिया ये दो परिणाम पाये जाते हैं। वर्द्धमान की स्थिति जघन्य उत्कृष्ट अन्तर्मुहूर्त की होती है। अवट्ठिया की

+जब पुलाक के परिणाम बढ़ते हों और कषाय के द्वारा बाधित होते हों उस समय वह एकादि समय तक वर्द्धमान परिणामका अनुभव करता है। इसलिए पुलाक के वर्द्धमान परिणाम की स्थिति जघन्य एक समय और उत्कृष्ट अन्तर्मुहूर्त की होती है। इसी तरह बकुश, प्रतिसेवना कुशील और कषायकुशील के विषय में जान लेना चाहिए किन्तु बकुश आदि में जघन्य एक समय वर्द्धमान परिणाम मरण की अपेक्षा भी घटित हो सकता है। पुलाकपने में मरण नहीं होता है, इसलिए पुलाक में मरण की अपेक्षा एक समय घटित नहीं होता है। मरण के समय में पुलाक कषायकुशील आदि रूप से परिणत होता है। पुलाक का जो मरण कहा गया है वह भूतभाव (गये काल या भविष्य काल) की अपेक्षा से जानना चाहिये।

* निर्ग्रन्थ में हीयमान परिणाम नहीं होता है। यदि उसके परिणामों की हानि हो तो वह कषायकुशील कहलाता है।

स्थिति जघन्य ÷एक समय की उत्कृष्ट अन्तर्मुहूर्त की होती है।

स्नातक में वर्द्धमान और अवट्ठिया ये दो परिणाम पाये जाते हैं। * वर्द्धमान की स्थिति जघन्य उत्कृष्ट अन्तर्मुहूर्त की होती है और अवट्ठिया की स्थिति जघन्य अन्तर्मुहूर्त की, उत्कृष्ट देश ऊणी करोड़ पूर्व की होती है।

÷ निर्ग्रन्थ जघन्य और उत्कृष्ट अन्तर्मुहूर्त तक वर्द्धमान परिणाम वाला होता है। जब उसे केवलज्ञान हो जाता है तब उसके परिणामान्तर (दूसरा परिणाम) हो जाता है। निर्ग्रन्थ का मरण अवट्ठिया परिणाम में होता है। इसलिए उसके अवट्ठिया परिणाम की स्थिति एक समय की घटित हो सकती है।

* स्नातक जघन्य और उत्कृष्ट अन्तर्मुहूर्त तक वर्द्धमान परिणामवाला होता है। क्योंकि शैलेशी अवस्था में वर्द्धमान परिणाम अन्तर्मुहूर्त तक होता है। स्नातक के अवट्ठिया परिणामका समय भी जघन्य अन्तर्मुहूर्त का होता है, इसका कारण यह है कि केवलज्ञान उत्पन्न होने के बाद अन्तर्मुहूर्त तक अवट्ठिया (अवस्थित) परिणाम वाला रहकर शैलेशी अवस्था को स्वीकार करता है, इस अपेक्षा से अवट्ठिया परिणाम का समय जघन्य अन्तर्मुहूर्त का समझना चाहिये। अवट्ठिया परिणाम की उत्कृष्ट स्थिति देश ऊणी करोड़ पूर्व की होती है। इसका कारण यह है कि करोड़ पूर्व की आयुष्य वाले पुरुष को जन्मसे जघन्य नौ वर्ष बीतने पर केवल ज्ञान उत्पन्न हो। इस कारण से नौ वर्ष कम करोड़ पूर्व वर्ष तक अवट्ठिया परिणाम वाला होकर विचरता है। फिर शैलेशी अवस्था (चौदहवें गुणस्थान) में 'वर्द्धमान' परिणाम वाला होता है।

२० बन्ध द्वार— अहो भगवान् ! पुलाक में कितने कर्मों का बन्ध होता है ? हे गौतम ! * आयुष्य को छोड़कर बाकी ७ कर्मों का बन्ध होता है। बकुश और प्रतिसेवना कुशील में ७ या ८ कर्मों का बन्ध होता है। ÷ कषाय कुशील में ७ या ८ या ६ कर्मों का बन्ध होता है। सात का बन्ध होता है तो आयुष्य को छोड़ कर बाकी सात का होता है। छह का बन्ध होता है तो आयुष्य और मोहनीय को छोड़कर बाकी छह कर्मों का बन्ध होता है।

= निर्ग्रन्थ में एक साता वेदनीय का बन्ध होता है। × स्नातक में बन्ध होता भी है और नहीं भी होता है। यदि बन्ध होता है तो एक साता वेदनीय का बन्ध होता है।

---

* पुलाक अवस्था में आयुष्य का बन्ध नहीं होता है क्योंकि उसके आयुष्य बन्ध योग्य अध्यवसाय (परिणाम) नहीं होते हैं।

÷ कषाय कुशील सूक्ष्म सम्पराय गुणस्थानमें आयुष्य नहीं बांधता है क्योंकि आयुष्य का बन्ध अप्रमत्त गुणस्थानक तक ही होता है। बादर कषाय के उदय का अभाव होने से मोहनीय को भी नहीं बांधता है। इसलिए आयुष्य और मोहनीय के सिवाय ६ कर्मों को बांधता है।

= निर्ग्रन्थ योग निमित्तक एक साता वेदनीय कर्म बांधता है क्योंकि कर्म बन्ध के कारणों में से उसके सिर्फ योग का ही सद्भाव है।

× स्नातक अयोगी (चौदहवें) गुणस्थान में अबन्धक होता है, क्योंकि उस गुणस्थान में बन्ध हेतुओं का अभाव है। सयोगी अवस्था में स्नातक बन्धक होता है और साता वेदनीय का बंध करता है।

२२—वेद द्वार—अहो भगवान् ! पुलाक कितने कर्मों को वेदता है ? हे गौतम ! आठ ही कर्मों को वेदता है । इसी तरह बकुश, प्रतिसेवना कुशील और कषाय कुशील आठ ही कर्मों को वेदते हैं । निर्ग्रन्थ सात कर्मों को (मोहनीय वर्ज कर) वेदता है । स्नातक चार अघाती (वेदनीय, आयुष्य, नाम, गोत्र) कर्मों को वेदता है ।

२३—उदीरणा द्वार—अहो भगवान् ! पुलाक कितने कर्मों की उदीरणा करता है ? हे गौतम ! छह कर्मों की (* आयुष्य और वेदनीय कर्मों को छोड़कर) उदीरणा करता है । बकुश और प्रतिसेवना कुशील सात या आठ या छह कर्मों की उदीरणा करते हैं । कषायकुशील सात या आठ या छह या पांच कर्मों (आयुष्य, वेदनीय और मोहनीय को छोड़कर) की उदीरणा करता है । निर्ग्रन्थ पांच या दो (नाम और गोत्र) कर्मों की उदीरणा करता है । स्नातक ÷ दो (नाम और गोत्र)

---

* पुलाक आयुष्य और वेदनीय कर्म की उदीरणा नहीं करता है । क्योंकि उसके इस प्रकार के अध्यवसाय स्थानक नहीं होते हैं किन्तु वह पहले उदीरणा करके फिर पुलाकपन को प्राप्त होता है । इसी प्रकार बकुशादि के विषय में समझना चाहिये, जिन जिन कर्मप्रकृतियों की वह उदीरणा नहीं करता है, उन २ कर्म प्रकृतियों की उदीरणा वह पहले करके फिर बकुशादिपणे को प्राप्त होता है ।

÷ स्नातक सयोगी अवस्था में नाम और गोत्र कर्म की उदीरणा करता है । आयुष्य और वेदनीय की उदीरणा तो वह पहले कर चुका है, फिर स्नातकपणे को प्राप्त होता है ।

कर्मों की उदीरणा करता है या उदीरणा नहीं करता है।

२४—उवसंपजहएण (उपसंपद हान) द्वार—अहो भग
वान्! पुनाक पुलाकपणे को त्यागता हुआ किसको स्वीक
करता है? हे गौतम! पुलाकपणे को त्यागता हुआ दो स्था
में जाता है—कषाय कुशील में या असंयम में। बकु
बकुशपणे को छोड़ता हुआ चार स्थानों में जाता है—प्रति
वना कुशील में, या कषाय कुशील में, या संयमासंयम में
असंयन में। प्रतिसेवना कुशील प्रतिसेवना कुशीलपणे
छोड़ता हुआ चार स्थानों में जाता है—बकुश में या कषा
कुशील में, या असंयम में या संयमासंयम में। कषायकुशी
कषाय कुशीलपणे को छोड़ता हुआ छह स्थानों में जाता है
पुलाक, बकुश, प्रतिसेवनाकुशील, निर्ग्रन्थ, असंयम, संयम
संयम। * निर्ग्रन्थ निर्ग्रन्थपणे को छोड़ता हुआ तीन स्था
में जाता है-कषायकुशील, स्नातक, असंयम।

स्नातक स्नातकपणे को छोड़ता हुआ सिद्धगति (मोक्ष

---

* उपशम निर्ग्रन्थ उपशम श्रेणी से पड़ता हुआ कषाय कुशील हो
है। यदि उपशम श्रेणी के शिखर पर मरण हो जाय तो देवों में उत्प
होता हुआ असंयती होता है, देशविरति नहीं होता क्योंकि देवों में दे
विरतिपणा नहीं है। यद्यपि श्रेणी से पड़ कर देशविरति भी होता
तथापि उसका यहाँ कथन नहीं किया गया है क्योंकि श्रेणी से गि
हो तुरन्त देशविरति नहीं होता है परन्तु कषायकुशील होकर फिर पी
देशविरति होता है।

को प्राप्त होता है।

२५-संज्ञा द्वार—अहो भगवान्! क्या पुलाक सन्नोवउत्ता (आहारादि की अभिलाषा वाला) है या नो सन्नोवउत्ता (आहारादि में आसक्ति रहित) है? हे गौतम! ÷ नो सन्नोवउत्ता है। इसी तरह निर्ग्रन्थ और स्नातक भी नो सन्नोवउत्ता हैं।

बकुश प्रतिसेवना कुशील और कषाय कुशील सन्नोवउत्ता, नो सन्नोवउत्ता-भी होते हैं। सन्नोवउत्ता होते हैं तो चारों ही (आहार संज्ञा, भय संज्ञा, मैथुन संज्ञा, परिग्रह संज्ञा) संज्ञा पाई जाती हैं।

२६-आहार द्वार—अहो भगवान्! पुलाक आहारक होता है या अनाहारक? हे गौतम! पुलाक * आहारक होता

÷ जो आहारादि की अभिलाषा वाला हो उसे सन्नोवउत्ता कहते हैं। जो आहारादिका उपभोग करते हुए भी उसमें आसक्तिरहित हो उसे नोसन्नोवउत्ता कहते हैं। आहारादि के विषय में आसक्ति रहित होने से पुलाक, निर्ग्रन्थ और स्नातक नोसन्नोवउत्ता होते हैं। शंका-निर्ग्रन्थ और स्नातक वीतरागी होने के कारण नोसन्नोवउत्ता होते हैं किन्तु पुलाक तो सरागी है वह नोसन्नोवउत्ता कैसे हो सकता है?

समाधान-सराग अवस्था में आसक्ति रहित पणा सर्वथा नहीं होता है यह बात नहीं है क्योंकि बकुशादि सराग होते हुए भी निःसंग होते हैं ऐसा कहा गया है।

* पुलाक से लेकर निर्ग्रन्थ तक मुनियों को विग्रहगति आदि का कारण नहीं होने से ये अनाहारक नहीं होते किन्तु आहारक ही होते हैं।

है। इसी तरह बकुश, प्रतिसेवना कुशील, कषाय कुशील और निर्ग्रन्थ भी आहारक होते हैं। ÷स्नातक आहारक भी होता है और अनाहारक भी होता है।

२७—भव द्वार—अहो भगवान्! पुलाक कितने भव करता है? हे गौतम! ※ जघन्य एक भव और उत्कृष्ट तीन भव (मनुष्य के) करता है। इसी तरह निर्ग्रन्थ का कह देना चाहिये।

× बकुश, प्रतिसेवना कुशील और कषाय कुशील जघन्य

÷ स्नातक केवलीसमुद्घात के तीसरे, चौथे और पांचवें समय में तथा अयोगी अवस्था में अनाहारक होता है, बाकी समय में आहारक होता है।

※ जघन्यतः एक भव में पुलाक होकर कषाय कुशील पणा आदि किसी को एकबार या अनेक बार, उसी भव में या अन्य भव में प्राप्त करके मोक्ष जाता है। उत्कृष्ट देवादिभव से अन्तरित मनुष्य में तीन भव तक पुलाकपणा प्राप्त करता है।

× कोई एक भव में बकुशपणा और कषायकुशीलपणा प्राप्त करके मोक्ष चला जाता है और कोई एक भव में बकुशपणा प्राप्त करके भवान्तर में बकुशपणा प्राप्त किये बिना ही मोक्ष चला जाता है, इसलिये बकुश का जघन्य एक भव कहा गया है। उत्कृष्ट आठ भव कहे गये हैं, इसका कारण यह है कि उत्कृष्ट आठ भव तक चारित्रकी प्राप्ति होती। इनमें से कोई तो आठ भव बकुशपणा द्वारा और अन्तिम भव कषायादि सहित बकुशपणा द्वारा पूर्ण करता है और कोई तो हरेक भव प्रतिसेवना कुशीलपणा आदिसे युक्त बकुशपणासे पूर्ण करता है।

एक भव, उत्कृष्ट ८ भव करते हैं। स्नातक उसी भव में मोक्ष जाता है।

२८–आकर्ष द्वार–अहो भगवान्! पुलाक एक भव में कितने वार आता है? हे गौतम! एक भव में जघन्य ×एक वार, उत्कृष्ट तीन वार आता है। वहुत भव आसरी *जघन्य दो वार, उत्कृष्ट सात वार आता है।

वकुश, प्रतिसेवना कुशील और कषायकुशील एक भव आसरी जघन्य एक वार, ÷उत्कृष्ट प्रत्येक सौ वार आता है। वहुत भव आसरी जघन्य दो वार, उत्कृष्ट प्रत्येक हजार वार आता है।

× यहाँ चारित्र के परिणाम को आकर्ष कहा है। पुलाक को एक भव में जघन्य एक वार उत्कृष्ट तीन वार आकर्ष होता है।

*पुलाक एक भव में एक और अन्य भव में दूसरा इस तरह अनेक भव आसरी जघन्यतः दो वार आता है और उत्कृष्ट सात वार आता है। पुलाकपणा उत्कृष्ट तीन भव में आता है, इनमें से एक भव में उत्कृष्ट तीन वार आता है। प्रथम भव में एक वार आता है और वाकी दो भावों में तीन तीन वार आता है। इस तरह से सात वार आता है।

÷वकुश के उत्कृष्ट आठ भव होते हैं। उनमें हरेक भव में उत्कृष्ट प्रत्येक सौ वार आता है तब आठ भव में ७२०० (९००× ८=७२००) वार आता है। इस प्रकार अनेक भव आसरी वकुश प्रत्येक हजार वार आता है।

निर्ग्रन्थ एक भव में जघन्य एक बार उत्कृष्ट दो बार आता है। अनेक भव आश्रयी जघन्य दो बार उत्कृष्ट पांच बार आता है।

स्नातक एक भव में एक बार आता है। स्नातक के अनेक भव नहीं होते हैं।

२६—प्रश्न—अहो भगवन्! पुलाक की स्थिति कितनी है? हे गौतम! एक जीव आश्रयी जघन्य उत्कृष्ट अन्तर्मुहूर्त की होती है और अनेक जीव आश्रयी जघन्य एक समय की,

---

निर्ग्रन्थ को एक भव में जघन्य एक बार और उत्कृष्ट दो बार उपशम श्रेणि होती है। इसलिये उसके आकर्ष भी जघन्य एक और उत्कृष्ट दो होते हैं यानी निर्ग्रन्थपना एक भव में जघन्य एक बार उत्कृष्ट दो बार आता है।

निर्ग्रंथ के उत्कृष्ट तीन भव होते हैं। उनमें से पहले भव में दो बार, दूसरे भव में दो बार और तीसरे भव में एक बार आता है। क्षपक श्रेणी करके मोक्ष चला जाता है। इस प्रकार अनेक भव आसरी निर्ग्रन्थ पांच बार आता है।

पुलाकपना को प्राप्त करने वाला जीव जब तक अन्तर्मुहूर्त पूरा न हो वहाँ तक मरता नहीं है। और पुलाकपने से गिरता भी नहीं है। इसलिये उसकी स्थिति जघन्य से भी अन्तर्मुहूर्त है और उत्कृष्ट से भी अन्तर्मुहूर्त है।

एक पुलाक जब अपने अन्तर्मुहूर्त के अन्तिम समय में होता है, ठीक उसी समय दूसरा जीव पुलाकपने को

उत्कृष्ट अन्तर्मुहूर्त की होती है।

* बकुश, प्रतिसेवना कुशील और कषाय कुशील की स्थिति एक जीव आसरी जघन्य एक समय की, उत्कृष्ट देश ऊणी करोड़पूर्व की होती है। अनेक जीव आसरी सदाकाल शाश्वत स्थिति है। निर्ग्रन्थ की स्थिति एक जीव आसरी और अनेक जीव आसरी जघन्य एक समय की, उत्कृष्ट अन्तमुहूर्त की होती है। स्नातक की स्थिति एक जीव आसरी जघन्य अन्तमुहूर्त की, उत्कृष्ट देश ऊणी करोड़पूर्व की होती है। अनेक जीव आसरी सदाकाल शाश्वत की होती है।

२० अन्तर द्वार—अहो भगवान् ! पुलाक का अन्तर काल कितना है ? हे गौतम ! काल की अपेक्षा जघन्य अन्तमुहूर्त

है। इसलिये दोनों पुलाकों का सद्भाव एक समय में होता है। वे दो होने से अनेक कहलाये। इस प्रकार अनेक पुलाकों का जघन्य काल एक समय होता है और उनका उत्कृष्ट काल अन्तमुहूर्त होता है। क्योंकि पुलाक एक समय में उत्कृष्ट प्रत्येक हजार होते हैं। वे अनेक होते हुए भी उनका काल अन्तर्मुहूर्त है किन्तु एक पुलाक की स्थिति के अन्तमुहूर्त से अनेक पुलाकों की स्थिति का अन्तर्मुहूर्त बड़ा होता है।

* बकुश चारित्र प्राप्त होने के बाद पहले समय में मर जाय तो जघन्य एक समय की स्थिति होती है, करोड़पूर्व की आयु वाला आठ वर्ष के अन्त में चारित्र स्वीकार करे, उसकी अपेक्षा उत्कृष्ट स्थिति देशऊणी (कुछ कम) करोड़पूर्व की होती है।

का उत्कृष्ट अनन्त काल * का होता है। क्षेत्र की अपेक्षा देशोन अर्द्ध पुद्गल परावर्तन का होता है। इसी तरह बकुश, प्रति सेवना कुशील, कषाय कुशील और निर्ग्रन्थ का कह देना चाहिये। स्नातक का अन्तर नहीं होता है।

अनेक जीव आसरी पुलाक का अन्तर जघन्य एक समय का उत्कृष्ट संख्यात वर्षों का होता है। बकुश, प्रतिसेवना कुशील, कषाय कुशील और स्नातक का अन्तर नहीं होता है। निर्ग्रन्थ का जघन्य एक समय का उत्कृष्ट छह महीनों का होता है।

२१–समुद्घात द्वार—अहो भगवान्! पुलाक में कितनी समुद्घात होती? हे गौतम! =तीन समुद्घात (वेदना समुद्-

---

* काल से अनन्त उत्सर्पिणी अवसर्पिणी का। क्षेत्र से देशोन अर्द्ध पुद्गलपरावर्तन का। भगवती सूत्र के थोकड़ों के चौथे भाग में थोकड़ा नंबर १०२ में पुद्गलपरावर्तन के आठ भेदों का वर्णन है। उनमें सूक्ष्म क्षेत्र पुद्गलपरावर्तन का स्वरूप बताया है। यहाँ उसी सूक्ष्म क्षेत्र पुद्गलपरावर्तन से अभिप्राय है।

=पुलाक में संज्वलन कषाय का उदय होता है इसलिये कषाय समुद्घात का संभव है।

यद्यपि पुलाक में मरण नहीं होता है तथापि मारणान्तिक समुद्घात होती है। इसका कारण यह है कि मारणान्तिक समुद्घात से निवृत्त होने के बाद कषायकुशीलादि परिणाम में उसका मरण होता है।

घात, कषाय समुद्घात, मारणान्तिक समुद्घात) होती हैं। बकुश और प्रतिसेवनाकुशील में पांच समुद्घात (आहारक समुद्घात और केवली समुद्घात को छोड़ कर) होती हैं। कषायकुशील में छह समुद्घात (केवली समुद्घात को छोड़ कर) होती हैं। निर्ग्रन्थ में समुद्घात नहीं होती है। स्नातक में एक केवलिसमुद्घात पाई जात ।

३२–क्षेत्रद्वार–अहो भगवान्! पुलाक लोक के संख्यातवें भाग में, असंख्यातवें भाग में, बहुत संख्यातवें भागों में, बहुत असंख्यातवें भागों में या सारे लोक में होता है? हे गौतम! लोक के असंख्यातवें भाग में होता है शेष चार बोलों में नहीं होता। इसी तरह बकुश, कुशील और निर्ग्रन्थ का कह ना चाहिए। * स्नातक लोक के असंख्यातवें भाग में होता है, असंख्याता भागों में होता है तथा सम्पूर्ण लोक में होता है।

३३–स्पर्शनाद्वार–अहो भगवान्! पुलाक लोक के संख्यातवें भाग को, असंख्यातवें भाग को, बहुत से संख्यातवें

---

* केवलीसमुद्घात के समय जब स्नातक शरीरस्थ होता है अथवा दण्ड कपाट अवस्था में होता है तब लोक के असंख्या भाग में रहता है। मन्थान अवस्था में वह लोक के बहुत व्याप्त कर लेता है और थोड़ा भाग अव्याप्त रहत लोक के असंख्याता भागों में रहता है और जब कर लेता है तब वह सम्पूर्ण लोक में रहता है।

का उत्कृष्ट अनन्त काल * का होता है। क्षेत्र की अपेक्षा देशोन अर्द्ध पुद्गल परावर्तन का होता है। इसी तरह बकुश, प्रति सेवना कुशील, कषाय कुशील और निर्ग्रन्थ का कह देना चाहिये। स्नातक का अन्तर नहीं होता है।

अनेक जीव आसरी पुलाक का अन्तर जघन्य एक समय का उत्कृष्ट संख्यात वर्षों का होता है। बकुश, प्रतिसेवना कुशील, कषाय कुशील और स्नातक का अन्तर नहीं होता है। निर्ग्रन्थ का जघन्य एक समय का उत्कृष्ट छह महीनों का होता है।

२१–समुद्घात द्वार—अहो भगवान्! पुलाक में कितनी समुद्घात होती? हे गौतम! =तीन समुद्घात (वेदना समुद्-

---

* काल से अनन्त उत्सर्पिणी अवसर्पिणी का, क्षेत्र से देशोन अर्द्ध पुद्गलपरावर्तन का। भगवती सूत्र के थोकड़ों के चौथे भाग में थोकड़ा नंबर १०२ में पुद्गलपरावर्तन के आठ भेदों का वर्णन है। उनमें सूक्ष्म क्षेत्र पुद्गलपरावर्तन का स्वरूप बताया है। यहाँ उसी सूक्ष्म क्षेत्र पुद्गलपरावर्तन से अभिप्राय है।

= पुलाक में संज्वलन कषाय का उदय होता है इसलिये कषाय समुद्घात का संभव है।

यद्यपि पुलाक में मरण नहीं होता है तथापि मारणान्तिक समुद्घात होती है। इसका कारण यह है कि मारणान्तिक समुद्घात से निवृत्त होने के बाद कषायकुशीलादि परिणाम में उसका मरण होता है।

घात, कषाय समुद्घात, मारणान्तिक समुद्घात) होती हैं। बकुश और प्रतिसेवनाकुशील में पांच समुद्घात (आहारक समुद्घात और केवली समुद्घात को छोड़ कर) होती हैं। कषायकुशील में छह समुद्घात (केवली समुद्घात को छोड़ कर) होती हैं। निर्ग्रन्थ में समुद्घात नहीं होती है। स्नातक में एक केवलिसमुद्घात पाई जात [illegible]।

३२–क्षेत्रद्वार–अहो भगवान्! पुलाक लोक के संख्यातवें भाग में, असंख्यातवें भाग में, बहुत संख्यातवें भागों में, बहुत असंख्यातवें भागों में या सारे लोक में होता है? हे गौतम! लोक के असंख्यातवें भाग में होता है शेष चार बोलों में नहीं होता। इसी तरह बकुश, कुशील और निर्ग्रन्थ का कह देना चाहिए। * स्नातक लोक के असंख्यातवें भाग में होता है, असंख्याता भागों में होता है तथा सम्पूर्ण लोक [illegible] होता है।

३३–स्पर्शनाद्वार–अहो भगवान्! पुलाक लोक के [illegible]ंख्यातवें भाग को, असंख्यातवें भाग को, बहुत से संख्यातवें

---

* केवलीसमुद्घात के समय जब स्नातक शरीरस्थ होता है अथवा दण्ड कपाट अवस्था में होता है तब लोक के असंख्[illegible] भाग में रहता है। मन्थान अवस्था में वह लोक के बहुत [illegible] व्याप्त कर लेता है और थोड़ा भाग अव्याप्त रहत[illegible] लोक के असंख्याता भागों में रहता है और जब [illegible] कर लेता है तब वह सम्पूर्ण लोक में रहता है।

का उत्कृष्ट अनन्त काल * का होता है। क्षेत्र की अपेक्षा देशोन अर्द्ध पुद्गल परावर्तन का होता है। इसी तरह बकुश, प्रति सेवना कुशील, कषाय कुशील और निर्ग्रन्थ का कह देना चाहिये। स्नातक का अन्तर नहीं होता है।

अनेक जीव आसरी पुलाक का अन्तर जघन्य एक समय का उत्कृष्ट संख्यात वर्षों का होता है। बकुश, प्रतिसेवना कुशील, कषाय कुशील और स्नातक का अन्तर नहीं होता है। निर्ग्रन्थ का जघन्य एक समय का उत्कृष्ट छह महीनों का होता है।

३१-समुद्घात द्वार—अहो भगवान्! पुलाक में कितनी समुद्घात होती? हे गौतम! =तीन समुद्घात (वेदना समुद्-

---

* काल से अनन्त उत्सर्पिणी अवसर्पिणी का क्षेत्र से देशोन अर्द्ध पुद्गलपरावर्तन का। भगवती सूत्र के थोकड़ों के चौथे भाग में थोकड़ा नंबर १०२ में पुद्गलपरावर्तन के आठ भेदों का वर्णन है। उनमें सूक्ष्म क्षेत्र पुद्गलपरावर्तन का स्वरूप बताया है। यहाँ उसी सूक्ष्म क्षेत्र पुद्गलपरावर्तन से अभिप्राय है।

= पुलाक में संज्वलन कषाय का उदय होता है इसलिये कषाय समुद्घात का संभव है।

यद्यपि पुलाक में मरण नहीं होता है तथापि मारणान्तिक समुद्घात होती है। इसका कारण यह है कि मारणान्तिक समुद्घात से निवृत्त होने के बाद कषायकुशीलादि परिणाम में उसका मरण होता है।

घात, कषाय समुद्घात, मारणान्तिक समुद्घात) होती हैं। बकुश और प्रतिसेवनाकुशील में पांच समुद्घात (आहारक समुद्घात और केवली समुद्घात को छोड़ कर) होती हैं। कषायकुशील में छह समुद्घात (केवली समुद्घात को छोड़ कर) होती हैं। निर्ग्रन्थ में समुद्घात नहीं होती है। स्नातक में एक केवलिसमुद्घात पाई जात ।

३२–क्षेत्रद्वार–अहो भगवान् ! पुलाक लोक के संख्यातवें भाग में, असंख्यातवें भाग में, बहुत संख्यातवें भागों में, बहुत असंख्यातवें भागों में या सारे लोक में होता है ? हे गौतम ! लोक के असंख्यातवें भाग में होता है शेष चार बोलों में नहीं होता। इसी तरह बकुश, कुशील और निर्ग्रन्थ का कह देना चाहिए। * स्नातक लोक के असंख्यातवें भाग में होता है, असंख्याता भागों में होता है तथा सम्पूर्ण लोक में होता है।

३३–स्पर्शनाद्वार–अहो भगवान् ! पुलाक लोक के संख्यातवें भाग को, असंख्यातवें भाग को, बहुत से संख्यातवें

---

* केवलीसमुद्घात के समय जब स्नातक शरीरस्थ होता है अथवा दण्ड कपाट अवस्था में होता है तब लोक के असंख्

तेईसवें तीर्थंकर के साधु चौवीसवें तीर्थंकर के शासन में आवें उनके चारित्र को निरतिचार छेदोपस्थापनीय चारित्र कहते हैं।

जिस चारित्र में परिहार तप किया जाय उसे परिहार विशुद्धि चारित्र कहते हैं। नौ साधुओं का गण परिहार तप अङ्गीकार करता है। जैसे नौ व्यक्ति नौ नौ वर्ष की उम्रमें दीक्षा लें, बीस वर्ष तक गुरु महाराज के पास ज्ञान पढ़ें, जघन्य नवमे पूर्व की तीसरी आयारवत्थु (आचार वस्तु), और उत्कृष्ट कुछ कम दस पूर्व का ज्ञान पढ़ें, ऐसे नौ साधु गुरुमहाराज की आज्ञा लेकर परिहार विशुद्धि चारित्र अङ्गीकार करते हैं। उनमेंसे पहले छह महीने तक चार साधु तपस्या करते हैं चार साधु वैयावच्च करते हैं और एक साधु व्याख्यान देता है। दूसरी छमाही में तपस्या करने वाले साधु वैयावच्च करते हैं और वैयावच करने वाले साधु तपस्या करते हैं। व्याख्यान देनेवाला साधु व्याख्यान देता है। तीसरी छमाही में व्याख्यान देने वाला साधु तपस्या करता है। बाकी आठ साधुओं में से एक साधु व्याख्यान देता है, शेष सात साधु वैयावच्च करते हैं। ग्रीष्म ऋतु में जघन्य एक उपवास, मध्यम बेला (दो उपवास) और उत्कृष्ट तेला (तीन उपवास) तप करते हैं। शीत काल में जघन्य बेला, मध्यम तेला और उत्कृष्ट चौला (चार उपवास) करते हैं। वर्षा काल में जघन्य तेला, मध्यम चौला और उत्कृष्ट पचौला (पांच उपवास) करते हैं। पारणे में आयंबिल करते हैं। इस तरह अठारह महीनों में इस परिहार

तप का कल्प पूर्ण होता है। परिहार तप पूरा होने पर वे साधु या तो इसी कल्प को फिर आरम्भ करते हैं या जिन कल्प धारण कर लेते हैं या वापिस गच्छ में आजाते हैं। यह चारित्र छेदोपस्थापनीय चारित्र वालों के ही होता है, दूसरों के नहीं होता। इसके दो भेद हैं—णिव्विसमाणए (निर्विशमान) और निव्विट्ठकाइए (निर्विष्टकायिक)। जो साधु तप करते हैं, उन्हें णिव्विसमाणए कहते हैं और जो साधु तप कर चुके हों उन्हें निव्विट्ठकाइए कहते हैं।

जिस चारित्र में सूक्ष्मसम्पराय अर्थात् संज्वलन लोभ का सूक्ष्म अंश रहता है उसे सूक्ष्म सम्पराय चारित्र कहते हैं। इसके दो भेद हैं—विशुद्ध्यमान और संक्लिश्यमान। क्षपक श्रेणि और उपशमश्रेणि पर चढ़ते हुए साधु के परिणाम उत्तरोत्तर शुद्ध रहने से उनका सूक्ष्मसम्पराय चारित्र विशुद्ध्यमान कहलाता है। उपशमश्रेणि से गिरते हुए साधु के परिणाम संक्लेश युक्त होते हैं। इसलिए उनका सूक्ष्मसम्पराय चारित्र संक्लिश्यमान कहलाता है।

सर्वथा कषाय का उदय न होने से अतिचार रहित चारित्र को यथाख्यात चारित्र कहते हैं, इसके दो भेद हैं—उपशान्त मोह वीतराग (प्रतिपाती) और क्षीणमोह वीतराग (अप्रतिपाती)। क्षीण मोह वीतराग के दो भेद हैं—छद्मस्थ और केवली। केवली के दो भेद—सयोगी केवली और अयोगी केवली।

२–वेद द्वार–अहो भगवान्! सामायिक चारित्र वाला

तेईसवें तीर्थंकर के साधु चौवीसवें तीर्थंकर के शासन में आवें उनके चारित्र को निरतिचार छेदोपस्थापनीय चारित्र कहते हैं।

जिस चारित्र में परिहार तप किया जाय उसे परिहार विशुद्धि चारित्र कहते हैं। नौ साधुओं का गण परिहार तप अङ्गीकार करता है। जैसे नौ व्यक्ति नौ नौ वर्ष की उम्रमें दीक्षा लें, बीस वर्ष तक गुरु महाराज के पास ज्ञान पढें, जघन्य नवमे पूर्व की तीसरी आयारवत्थु (आचार वस्तु), और उत्कृष्ट कुछ कम दस पूर्व का ज्ञान पढें, ऐसे नौ साधु गुरुमहाराज की आज्ञा लेकर परिहार विशुद्धि चारित्र अङ्गीकार करते हैं। उनमेंसे पहले छह महीने तक चार साधु तपस्या करते हैं चार साधु वैयावच्च करते हैं और एक साधु व्याख्यान देता है। दूसरी छमाही में तपस्या करने वाले साधु वैयावच्च करते हैं और वैयावच्च करने वाले साधु तपस्या करते हैं। व्याख्यान देनेवाला साधु व्याख्यान देता है। तीसरी छमाही में व्याख्यान देने वाला साधु तपस्या करता है। वाकी आठ साधुओं में से एक साधु व्याख्यान देता है, शेष सात साधु वैयावच्च करते हैं। ग्रीष्म ऋतु में जघन्य एक उपवास, मध्यम बेला (दो उपवास) और उत्कृष्ट तेला (तीन उपवास) तप करते हैं। शीत काल में जघन्य बेला, मध्यम तेला और उत्कृष्ट चौला (चार उपवास) करते हैं। वर्षा काल में जघन्य तेला, मध्यम चौला और उत्कृष्ट पचौला (पांच उपवास) करते हैं। पारणे में आयंबिल करते हैं। इस तरह अठारह महीनों में इस परिहार

तप का कल्प पूर्ण होता है। परिहार तप पूरा होने पर वे साधु या तो इसी कल्प को फिर आरम्भ करते हैं या जिन कल्प धारण कर लेते हैं या वापिस गच्छ में आजाते हैं। यह चारित्र छेदोपस्थापनीय चारित्र वालों के ही होता है, दूसरों के नहीं होता। इसके दो भेद हैं—णिव्विसमाणए (निर्विशमान) और निव्विट्ठकाइए (निर्विष्टकायिक)। जो साधु तप करते हैं, उन्हें णिव्विसमाणए कहते हैं और जो साधु तप कर चुके हों उन्हें निव्विट्ठकाइए कहते हैं।

जिस चारित्र में सूक्ष्मसम्पराय अर्थात् संज्वलन लोभ का सूक्ष्म अंश रहता है उसे सूक्ष्म सम्पराय चारित्र कहते हैं। इसके दो भेद हैं—विशुद्ध्यमान और संक्लिश्यमान। क्षपक श्रेणि और उपशमश्रेणि पर चढ़ते हुए साधु के परिणाम उत्तरोत्तर शुद्ध रहने से उनका सूक्ष्मसम्पराय चारित्र विशुद्ध्यमान कहलाता है। उपशमश्रेणि से गिरते हुए साधु के परिणाम संक्लेश युक्त होते हैं। इसलिए उनका सूक्ष्मसम्पराय चारित्र संक्लिश्यमान कहलाता है।

सर्वथा कषाय का उदय न होने से अतिचार रहित चारित्र को यथाख्यात चारित्र कहते हैं, इसके दो भेद हैं—उपशान्त मोह वीतराग (प्रतिपाती) और क्षीणमोह वीतराग (अप्रतिपाती)। क्षीण मोह वीतराग के दो भेद हैं—छद्मस्थ और केवली। केवली के दो भेद—सयोगी केवली और अयोगी केवली।

२–वेद द्वार–अहो भगवान्! सामायिक चारित्र वाला

सवेदी होता है या अवेदी होता है? हे गौतम! * सवेदी होता है अथवा अवेदी होता है। सवेदी होता है तो तीन वेद वाला होता है। अवेदी हो तो उपशान्तवेदी या क्षीण वेदी होता है। इसी तरह छेदोपस्थापनीय चारित्र वाला कह देना चाहिए।

परिहार विशुद्धि चारित्र वाला सवेदी होता है। उसमें दो वेद पाये जाते हैं—पुरुष वेद और पुरुष नपुंसक वेद (कृत्रिमनपुंसक)।

सूक्ष्मसम्पराय चारित्र वाला और यथाख्यात चारित्र वाला × अवेदी होता है।

३ रागद्वार—अहो भगवान्! सामायिक चारित्र वाला सरागी होता है या वीतरागी होता है? हे गौतम! सरागी होता है। इसी तरह छेदोपस्थापनीय, परिहार विशुद्धि और सूक्ष्म सम्पराय चारित्र वाले सरागी होते हैं। (यथाख्यात चारित्र वाला वीतरागी होता है (उपशान्त कषाय वीतरागी या क्षीण कषाय वीतरागी)।

---

* नवमें गुणस्थान तक सामायिक चारित्र होता है। नवमें गुणस्थान में वेद का उपशम या क्षय होता है। वहां सामायिक चारित्र वाला अवेदी होता है। नवमें से पहलेके गुणस्थानों में सवेदी होता है। यदि सवेदी होता है तो तीन वेद वाला होता है और यदि अवेदी होता है तो उपशान्त वेदी या क्षीण वेदी होता है।

× अवेदी—उपशान्त वेदी अथवा क्षीणवेदी होता है।

४-कल्पद्वार-अहो भगवान् ! सामायिक चारित्र वाले में कितने कल्प पाये जाते हैं ? हे गौतम ! * पांच कल्प पाये जाते हैं। छेदोपस्थापनीय और परिहार विशुद्धि चारित्र वाले में × तीन कल्प पाये जाते हैं-स्थित कल्प, जिन कल्प और स्थविरकल्प। सूक्ष्म सम्पराय और यथाख्यात चारित्र वाले में तीन कल्प पाये जाते हैं-स्थित कल्प, अस्थितकल्प, कल्पातीत।

५-नियंठा द्वार (निर्ग्रन्थ द्वार)-अहो भगवान् ! सामायिक चारित्र वाले में कितने नियंठा (निर्ग्रन्थ) पाये जाते हैं ? हे गौतम ! चार नियंठा पाये जाते हैं—पुलाक, बकुश, प्रतिसेवनाकुशील और कषाय कुशील। इसी तरह छेदोपस्थापनीय चारित्र में भी कह देना चाहिए। परिहार-विशुद्धि और सूक्ष्मसम्पराय में एक नियंठा कषायकुशील पाया जाता है। यथाख्यात चारित्र में दो नियंठा पाये जाते हैं—निर्ग्रन्थ और स्नातक।

६-प्रतिसेवना द्वार-अहो भगवान् ! सामायिक चारित्र

* कल्प पांच हैं-१ स्थित कल्प, २ अस्थित कल्प, ३ जिन कल्प ४-स्थविरकल्प, ५-कल्पातीत।

× बीच के बाईस तीर्थंकरों के तीर्थ में और महाविदेह क्षेत्र के तीर्थंकरों के तीर्थ में अस्थित कल्प होता है। वहां छेदोपस्थापनीय चारित्र नहीं होता है। इसलिये छेदोपस्थापनीय और परिहारविशुद्धि चारित्र वाले में अस्थित कल्प नहीं होता है।

कर्मभूमि में होता है या अकर्मभूमि में ? हे गौतम ! पन्द्रह कर्मभूमि में होता है। छेदोपस्थापनीय चारित्र वाला भरतादि दस क्षेत्र में होता है। सूक्ष्म सम्पराय और यथाख्यात चारित्र वाले पन्द्रह कर्मभूमि में होते हैं। साहरण (संहरण) आसरी ये चारों अढ़ाई द्वीप दो समुद्र में होते हैं। परिहार विशुद्धि चारित्र वाला भरतादि दस क्षेत्र में होता है। इसका साहरण नहीं होता है।

१२—काल द्वार—अहो भगवान् ! सामायिक चारित्र वाला किस काल में होता है ? हे गौतम ! जन्म आसरी अवसर्पिणी काल के तीसरे चौथे पांचवें आरे में होता है, सद्भाव (प्रवृत्ति) आसरी तीसरे चौथे पांचवें आरे में होता है। इसी तरह छेदोपस्थापनीय चारित्र का भी कह देना चाहिए। शेष तीन चारित्र वाले जन्म आसरी तीसरे चौथे आरे में होते हैं और सद्भाव आसरी तीसरे चौथे पांचवें आरे में होते हैं। उत्सर्पिणी काल में ये पाँचों चारित्र वाले जन्म आसरी दूसरे, तीसरे, चौथे आरे में होते हैं और सद्भाव आसरी तीसरे चौथे आरे में होते हैं। साहरण आसरी परिहार विशुद्धि चारित्र वाले का साहरण नहीं होता। शेष चार चारित्र वाले चार पलिभागों (१ देवकुरु उत्तर कुरु, २ हरिवास रम्यकवास, ३ हेमवत ऐरण्यवत, ४ महाविदेह क्षेत्र) में होते हैं। सामायिक, सूक्ष्म सम्पराय और यथाख्यात ये तीन चारित्र साहरण आसरी छहों आरोंमें हो सकते हैं। नो अवसर्पिणी नो उत्सर्पिणी काल आसरी-

सामायिक सूक्ष्म सम्पराय और यथाख्यात ये तीन चारित्र चौथे पलिभाग अर्थात् महाविदेह क्षेत्र में जन्म आसरी होते हैं।

१३–गतिद्वार–अहो भगवान्! सामायिक चारित्र वाला मर कर कहाँ जाता है? हे गौतम! जघन्य पहले देव लोक में, उत्कृष्ट पांच अनुत्तर विमान में जाता है। स्थिति जघन्य दो पल्योपम की, उत्कृष्ट तेतीस सागर की होती है। इसी तरह छेदोपस्थापनीय चारित्र का भी कह देना चाहिए। परिहार विशुद्धि वाला जघन्य पहले देवलोक में, उत्कृष्ट आठवें देवलोक में जाता है। स्थिति जघन्य दो पल्योपम की, उत्कृष्ट १८ सागर की होती है। सूक्ष्म सम्पराय और यथाख्यात चारित्र वाले सर्वार्थसिद्ध में जाते हैं, स्थिति अजघन्य अनुत्कृष्ट तेतीस सागर की होती है। तथा यथाख्यात चारित्रवाला मोक्षमें जाता है।

सामायिक और छेदोपस्थापनीय चारित्र वाले यदि आराधक होवें तो पांच पदवी (इन्द्र, सामानिक, तायत्तीसग (त्रायस्त्रिंश), लोकपाल, अहमिन्द्र) में से कोई एक पदवी पाता है। परिहार विशुद्धि चारित्र वाला यदि आराधक हो तो चार पदवियों (अहमिन्द्र को छोड़ कर) में से कोई एक पदवी पाता है। सूक्ष्म सम्पराय और यथाख्यात चारित्र वाला यदि आराधक हो तो एक 'अहमिन्द्र' की पदवी पाता है *।

१४–संयम स्थान द्वार–अहो भगवान्! सामायिक चारित्र

* स्पष्टीकरण निर्ग्रन्थ-नियण्ठा के फुटनोट पृष्ठ ८७-८८ में दिया गया है।

याले में कितने संयम के स्थान हैं ? हे गौतम ! असंख्याता हैं। इसी तरह छेदोपस्थापनीय, परिहारविशुद्धि और सूक्ष्म सम्पराय का भी कह देना चाहिए। यथाख्यात का संयम स्थान एक है।

अल्पबहुत्व—सब से थोड़ा यथाख्यात चारित्र का संयम स्थान, (एक), उससे सूक्ष्म सम्पराय के संयम स्थान असंख्यात गुणा, उससे परिहार विशुद्धि चारित्र के संयम स्थान असंख्यात गुणा, उससे सामायिक चारित्र और छेदोपस्थापनीय चारित्र के संयम स्थान परस्पर तुल्य असंख्यात गुणा हैं।

१५-संनिकर्ष (निकास) द्वार-अहो भगवान् ! सामायिक चारित्रके चारित्र पर्याय कितने हैं ? हे गौतम ! अनन्त हैं। इसी तरह यावत् यथाख्यात चारित्र तक कह देना चाहिए। सामायिक चारित्र सामायिक चारित्र परस्पर छट्ठाण वडिया हैं (संख्यात भाग हीन, असंख्यात भाग हीन, अनन्त भाग हीन, संख्यात गुण हीन, असंख्यात गुण हीन, अनन्तगुण हीन। संख्यात भाग अधिक, असंख्यात भाग अधिक, अनन्त भाग अधिक, संख्यातगुण अधिक, असंख्यात गुण अधिक, अनन्त गुण अधिक)। सामायिक चारित्र छेदोपस्थापनीय चारित्र के साथ छट्ठाण वडिया है। परिहार विशुद्धि चारित्र के साथ छट्ठाण वडिया है। सूक्ष्म सम्पराय और यथाख्यात चारित्र से अनन्त-गुण हीन (अनन्तवें भाग) है।

छेदोपस्थापनीय—छेदोपस्थापनीय परस्पर छट्ठाण वडिया

है। सामायिक चारित्र और परिहार विशुद्धि चारित्र के साथ छट्ठाण वडिया है। सूक्ष्म सम्पराय और यथाख्यात चारित्र से अनन्त गुण हीन है।

परिहार विशुद्धि परिहार विशुद्धि परस्पर छट्ठाण वडिया है। सामायिक चारित्र और छेदोपस्थापनीय के साथ छट्ठाण वडिया है सूक्ष्म सम्पराय और यथाख्यात चारित्र से अनन्त गुण हीन है।

सूक्ष्म सम्पराय सूक्ष्म सम्पराय परस्पर छट्ठाण वडिया है सामायिक, छेदोपस्थापनीय और परिहार विशुद्धि से अनन्तगुण अधिक है। यथाख्यात चारित्र से अनन्तगुण हीन है।

यथाख्यात चारित्र यथाख्यात चारित्र परस्पर तुल्य है। बाकी चार चारित्रों से अनन्तगुण अधिक है।

अल्प बहुत्व–सब से थोड़े सामायिक चारित्र और छेदोपस्थापनीय चारित्र के जघन्य चारित्रपर्याय परस्पर तुल्य, उससे परिहार विशुद्धि के जघन्य चारित्रपर्याय अनन्तगुणा, उससे परिहार विशुद्धि के उत्कृष्ट चारित्रपर्याय अनन्त गुणा, उससे सामायिक चारित्र और छेदोपस्थापनीय चारित्र के उत्कृष्ट चारित्रपर्याय परस्पर तुल्य अनन्तगुणा, उससे सूक्ष्मसम्पराय के जघन्य चारित्र पर्याय अनन्त गुणा उससे इसी चारित्र के उत्कृष्ट चारित्र पर्याय अनन्तगुणा, उससे यथाख्यात के अजघन्य उत्कृष्ट चारित्र पर्याय अनन्तगुणा हैं।

१६–योगद्वार–अहो भगवान्! सामायिक चारित्र वाला

सयोगी होता है या अयोगी ? हे गौतम ! सयोगी होता है। इसी तरह छेदोपस्थापनीय परिहार विशुद्धि और सूक्ष्म सम्पराय चारित्र वाला भी कह देना चाहिए। यथाख्यात चारित्र वाला सयोगी भी होता है और अयोगी भी होता है।

१७-उपयोगद्वार-अहो भगवान् ! सामायिक चारित्र में साकार (ज्ञान) उपयोग पाया जाता है या अनाकार (दर्शन) उपयोग ? हे गौतम ! दोनों उपयोग पाये जाते हैं। इसी तरह छेदोपस्थापनीय, परिहार विशुद्धि और यथाख्यात चारित्र में भी कह देना चाहिए। सूक्ष्म सम्पराय चारित्र में साकार उपयोग होता है, अनाकार उपयोग नहीं होता है।

१८-कषायद्वार-अहो भगवान् ! सामायिक चारित्र में कितने कषाय होते हैं ? हे गौतम ! संज्वलन कषाय ४, ३, २ पाये जाते हैं। इसी प्रकार छेदोपस्थापनीय का भी कह देना चाहिए। परिहार विशुद्धि में संज्वलन के चारों कषाय पाये जाते हैं। सूक्ष्म सम्पराय में एक कषाय (संज्वलन का लोभ) पाया जाता है। यथाख्यात चारित्र वाला अकषायी (उपशान्तकषायी या क्षीणकषायी) होता है।

१९-लेश्याद्वार-अहो भगवान् ! सामायिक चारित्रमें कितनी लेश्याएं पाईजाती हैं। हेगौतम ! छह लेश्या पाईजाती हैं। इसी तरह छेदोपस्थापनीय चारित्रमें भी कह देनी चाहिए। परिहार विशुद्धिमें तीन विशुद्ध लेश्या पाई जाती हैं। सूक्ष्मसम्पराय चारित्र में एक शुक्ल लेश्या पाई जाती है। यथाख्यात चारित्र में एक शुक्ल-

लेश्या पाई जाती है, अथवा नहीं पाई जाती है (अलेशी) होता है।

२०–परिणामद्वार–अहो भगवान् ! सामायिक चारित्र वाले में कितने परिणाम पाये जाते हैं? हे गौतम ! तीन परिणाम पाये जाते हैं–हीयमान, वर्द्धमान, अवस्थित (अवट्ठिया)। हीयमान, वर्द्धमान की स्थिति जघन्य एक समय की, उत्कृष्ट अन्तर्मुहूर्त की होती है। अवस्थित (अवट्ठिया) की स्थिति जघन्य एक समय की, उत्कृष्ट सात समय की होती है। इसी तरह छेदोपस्थापनीय और परिहार विशुद्धि चारित्र का भी कह देना चाहिए। सूक्ष्म सम्पराय चारित्र में * दो परिणाम पाये जाते हैं–वर्द्धमान और हीयमान। दोनों परिणामों की स्थिति जघन्य एक समय की उत्कृष्ट अन्तर्मुहूर्त की होती है। यथाख्यात चारित्र में दो परिणाम पाये जाते हैं–वर्द्धमान और अवस्थित (अवट्ठिया)। वर्द्धमान की स्थिति जघन्य उत्कृष्ट अन्तर्मुहूर्त की होती है। अवस्थित की स्थिति जघन्य एक समय की, उत्कृष्ट देश ऊणी (कुछ कम) करोड़ पूर्व की होती है।

२१ बन्ध द्वार–अहो भगवान् ! सामायिक चारित्र वाला

---

* सूक्ष्मसम्पराय वाला जब श्रेणि पर चढ़ता है तब वर्द्धमान परिणाम वाला होता है और जब श्रेणि से गिरता है तब हीयमान परिणाम वाला होता है। परन्तु स्वाभाविक रूप से वह स्थिर परिणाम वाला (अवट्ठिया) नहीं होता है।

हुआ ÷ चार ठिकाणे जाता है-सामायिक चारित्र में, या छेदोपस्थापनीय में, या यथाख्यात में, या असंयम में जाता है। यथाख्यात चारित्र वाला यथाख्यात चारित्र को छोड़ता हुआ * तीन ठिकाणे जाता है-सूक्ष्म सम्पराय चारित्र में, या असंयम में या मोक्ष में जाता है।

२५-संज्ञाद्वार-अहो भगवान्! सामायिक चारित्र वाला संज्ञा (आहारादि में आसक्ति) युक्त होता है या नोसंज्ञा युक्त होता ? हे गौतम! संज्ञा युक्त होता है (संज्ञा पावे चारों ही), या नोसंज्ञा युक्त होता है। इसी तरह छेदोपस्थापनीय और परिहारविशुद्धि का भी कह देना चाहिये। सूक्ष्मसम्पराय और यथाख्यात चारित्र वाला नोसंज्ञा युक्त

÷सूक्ष्मसम्पराय वाला चारित्र वाला जब श्रेणि से पड़ता है तो यदि वह पहले सामायिक चारित्र वाला हो तो सामायिक चारित्र को अङ्गीकार करता है और यदि वह पहले छेदोपस्थापनीय चारित्र वाला हो तो छेदोपस्थापनीय चारित्रको अङ्गीकार करता है। जब वह श्रेणिपर चढ़ता है तब यथाख्यात चारित्रको प्राप्त करता है। यदि काल कर जाता है तो देवगतिमें जाता है असंयम अङ्गीकार करता है।

* यथाख्यात चारित्र वाला यदि श्रेणि से पड़े तो यथाख्यातपणे का त्याग करता हुआ सूक्ष्म सम्परायपणे को प्राप्त करता है और यदि उपशम श्रेणि में (उपशान्तमोह अवस्था में) काल कर जाता है तो देवगति में जाता है, असंयतपणे को प्राप्त करता है। यदि स्नातक होता है तो सिद्धगति को प्राप्त करता है।

होता है (इनमें संज्ञा–आहारादि की आसक्ति नहीं होती है)।

२६–आहारक द्वार–अहो भगवान्! सामायिक चारित्र वाला आहारक होता है या अनाहारक होता है? हे गौतम! आहारक होता है। इसी तरह छेदोपस्थापनीय, परिहारविशुद्धि, और सूक्ष्मसम्पराय का कह देना चाहिए। यथाख्यात चारित्र वाला आहारक या अनाहारक होता है।

२७–भवद्वार–अहो भगवान्! सामायिक चारित्र वाला कितने भव करता है? हे गौतम! जघन्य एक भव करता है, उत्कृष्ट ८ भव करता है। इसी तरह छेदोपस्थापनीय चारित्र का कह देना चाहिए। परिहारविशुद्धि, सूक्ष्म सम्पराय और यथाख्यात चारित्र वाला जघन्य एक भव, उत्कृष्ट तीन भव करता है अथवा यथाख्यात चारित्र वाला उसी भव में मोक्ष जाता है।

२८–आकर्ष (आगरिसे) द्वार–अहो भगवान्! सामायिक चारित्र कितनी वार आता है? हे गौतम! एक भव आसरी जघन्य एक वार, उत्कृष्ट प्रत्येक सौ वार आता है। अनेक भव आसरी जघन्य दो वार, उत्कृष्ट प्रत्येक हजार वार आता है।

छेदोपस्थापनीय चारित्र एक भव आसरी जघन्य एक वार, उत्कृष्ट १२० वार आता है। अनेक भव आसरी जघन्य दो वार, उत्कृष्ट ६६० वार आता है। परिहार विशुद्धि चारित्र एक भव आसरी जघन्य एक वार, उत्कृष्ट तीन वार आता है। अनेक भव आसरी जघन्य दो वार, उत्कृष्ट

की स्थिति एक जीव आसरी जघन्य एक समय की, उत्कृष्ट २९ वर्ष कम करोड़ पूर्व वर्ष की होती है। सूक्ष्म सम्पराय की स्थिति एक जीव आसरी अनेक जीव आसरी जघन्य एक समय की, उत्कृष्ट अन्तर्मुहूर्त की होती है। अनेक जीव आसरी सामायिक चारित्र और यथाख्यात चारित्र सव्वद्धा (सर्वकाल में) पाया जाता है। छेदोपस्थापनीय चारित्र अनेक जीव आसरी ※ जघन्य २५०. वर्ष, उत्कृष्ट ५० लाख करोड़ सागर तक होता है। परिहारविशुद्धि चारित्र अनेक

कम नौ वर्ष की उम्र में दीक्षा ग्रहण करे। उसकी दीक्षा पर्याय बीस वर्ष की होवे तब उसको दृष्टिवाद अङ्ग पढ़ने की आज्ञा मिलती है। इसके बाद वह परिहार विशुद्धि चारित्र अङ्गीकार करता है। परिहार विशुद्धि चारित्र की जघन्य मर्यादा १८ महीने की है। इस लिए १८ महीने तक उसका पालन कर फिर परिहार विशुद्धि कल्प को ही अङ्गीकार करे। इसप्रकार निरन्तर यावज्जीवन परिहार विशुद्धि कल्प का ही पालन करे। इसप्रकार परिहार विशुद्धि चारित्र की उत्कृष्ट स्थिति २९ वर्ष कम करोड़ पूर्व वर्ष की होती है।

※ उत्सर्पिणी काल में प्रथम तीर्थंकर का तीर्थ २५० वर्ष तक रहता है। तब तक छेदोपस्थापनीय चारित्र होता है। इस लिए छेदोपस्थापनीय चारित्र का जघन्य काल २५० वर्ष होता है। अवसर्पिणी काल में प्रथम तीर्थङ्कर का तीर्थ ५० लाख करोड़ सागरोपम तक रहता है। तब तक छेदोपस्थापनीय चारित्र होता है। इसलिए उत्कृष्ट ५० लाख करोड़ सागरोपम तक होना कहा है।

जीव आसरी * जघन्य १४२ वर्ष, उत्कृष्ट दो करोड़ पूर्व में ५८ वर्ष कम होता है।

---

* परिहार विशुद्धि चारित्र का काल १४२ वर्ष होता है। जैसे कि उत्सर्पिणी काल में प्रथम तीर्थङ्कर के पास सौ वर्ष की आयुष्य वाला मनुष्य परिहारविशुद्धि चारित्र ग्रहण करे और उसके जीवन के अन्तिम समय में उसके पास सौ वर्ष की आयुष्य वाला मनुष्य परिहारविशुद्धि चारित्र स्वीकार करे। उसके बाद फिर कोई उस चारित्र को ग्रहण न कर सके। इस तरह दो सौ होते हैं। परन्तु प्रत्येक के उनतीस उनतीस वर्ष जाने के बाद परिहारविशुद्धि चारित्र की प्राप्ति होती है। इसलिए दो सौ वर्ष में से ५८ वर्ष कम कर देने से १४२ बाकी रहे। इतने वर्ष परिहार विशुद्धि चारित्र का जघन्य काल होता है। चूर्णिकार की व्याख्या भी इसी तरह की है किन्तु वह अवसर्पिणी काल के अन्तिम तीर्थङ्कर की अपेक्षा से है।

परिहारविशुद्धि चारित्र का उत्कृष्ट काल ५८ वर्ष कम दो करोड़ पूर्व का है। जैसे कि अवसर्पिणी काल के प्रथम तीर्थङ्कर के पास करोड़ पूर्व वर्ष की आयु वाला मनुष्य परिहारविशुद्धि चारित्र अङ्गीकार करे और उसके जीवन के अन्तिम समय में उसके पास करोड़ पूर्व की आयु वाला मनुष्य परिहार विशुद्धि चारित्र अङ्गीकार करे। इस तरह दो करोड़ पूर्व वर्ष हुए। इन में से प्रत्येक के उनतीस उनतीस वर्ष कम कर देने से ५८ वर्ष कम दो करोड़ पूर्व परिहार-विशुद्धि चारित्र का उत्कृष्ट काल है।

वाले में कितने समुद्घात पाये जाते हैं ? हे गौतम ! छह समुद्घात (केवली समुद्घात को छोड़ कर) पाये जाते हैं। इसी तरह छेदोपस्थापनीय चारित्र का भी कह देना चाहिए। परिहारविशुद्धि चारित्र में पहले के तीन समुद्घात पाये जाते हैं। सूक्ष्म सम्पराय में समुद्घात नहीं होता है। यथाख्यात चारित्र में एक केवलीसमुद्घात पाया जाता है।

३२–क्षेत्रद्वार–अहो भगवान् ! सामायिक चारित्र वाला लोक के संख्यातवें भाग में होता है या असंख्यातवें भाग में होता है ? हे गौतम ! लोक के असंख्यातवें भाग में होता है। इसी तरह छेदोपस्थापनीय परिहारविशुद्धि और सूक्ष्मसम्पराय का भी कह देना चाहिए। यथाख्यात चारित्र वाला * लोक के असंख्यातवें भाग में होता है तथा लोक के असंख्याता भागों में होता है अथवा सम्पूर्ण लोक में भी होता है।

३३–स्पर्शनद्वार–अहो भगवान् ! सामायिक चारित्र वाला कितने क्षेत्र को स्पर्श करता है ? हे गौतम ! जितने क्षेत्र में वह रहता है उतने ही क्षेत्र को स्पर्श करता है अर्थात् जितने

---

* यथाख्यात चारित्र वाला केवलिसमुद्घात करते समय जब शरीरस्थ होता है या दण्ड कपाटावस्था में होता है तब लोक के असंख्यातवें भाग में रहता है। मन्थान अवस्था में वह लोक का बहुत भाग व्याप्त कर लेता है थोड़ा सा भाग अव्याप्त रहता है तब वह लोक के असंख्याता भागों में रहता है। जब वह सम्पूर्ण लोक को व्याप्त कर लेता है तब सम्पूर्ण लोक में रहता है।

क्षेत्र की अवगाहना कही गई है, उतने ही क्षेत्र की स्पर्शना जाननी चाहिए। इसी तरह शेष चार चारित्र का भी जान लेना चाहिए।

सामायिक, छेदोपस्थापनीय, परिहार विशुद्धि और सूक्ष्म सम्पराय चारित्र वाले लोक के असंख्यातवें भाग को स्पर्शते हैं। यथाख्यात चारित्र वाला लोक के असंख्यातवें भाग को तथा लोक के असंख्याता भागों को अथवा सम्पूर्ण लोक को स्पर्शता है *।

३४–भावद्वार– अहो भगवान्! सामायिक चारित्र वाला किस भाव में होता है? हे गौतम! क्षायोपशमिक भाव में होता है। इसी तरह छेदोपस्थापनीय, परिहार विशुद्धि और सूक्ष्मसम्पराय चारित्र का भी कह देना चाहिए। यथाख्यात चारित्र वाला औपशमिक भाव में अथवा क्षायिक भाव में होता है।

३५–परिमाण द्वार–अहो भगवान्! सामायिक चारित्र वाले एक समय में कितने होते हैं? हे गौतम! वर्तमान आसरी सिय होते हैं और सिय नहीं होते हैं। यदि होते हैं तो जघन्य १–२–३, उत्कृष्ट प्रत्येक हजार होते हैं। छेदोपस्थापनीय जघन्य एक दो तीन उत्कृष्ट प्रत्येक सौ होते हैं। इसी तरह परिहार विशुद्धि चारित्र का भी कह देना चाहिए। वर्तमान आसरी सूक्ष्म सम्पराय चारित्र वाले सिय होते हैं,

* इसका खुलासा क्षेत्र द्वार की तरह जान लेना चाहिए।

गये हैं, उसी तरह यहाँ भी कह देना चाहिए किन्तु इतनी विशेषता है कि 'भवी' शब्द जोड़ देना चाहिए।

सेवं भंते ! सेवं भंते !!

थोकड़ा नं० १६०

श्री भगवतीजी सूत्र के २५ वें शतक के दसवें उद्देशे में 'अभवी नेरीया' का थोकड़ा चलता है सो कहते हैं—

१—अहो भगवान् ! अभवी नेरीया नरक में किस तरह उपजता है ? हे गौतम ! जिस तरह आठवें उद्देशे में सात द्वार कहे हैं उसी तरह यहाँ भी कह देना चाहिए किन्तु इतनी विशेषता है कि यहाँ 'अभवी' शब्द जोड़ देना चाहिए।

सेवं भंते ! सेवं भंते !!

थोकड़ा नं० १६१

श्री भगवतीजी सूत्र के २५ वें शतक के ग्यारहवें उद्देशे में 'समदृष्टि नेरीया' का थोकड़ा चलता है सो कहते हैं—

१—अहो भगवान् ! समदृष्टि नेरीया नरक में किस तरह उपजता है ? हे गौतम ! जिस तरह आठवें उद्देशे में सात द्वार कहे हैं उसी तरह [illegible] सात द्वार कह देने चाहिए। सिर्फ इतनी विशेषता है [illegible] यहाँ पांच स्थावर छोड़ कर शेष १६ दण्डक में 'समदृष्टि' शब्द जोड़ देना चाहिए।

सेवं भंते ! सेवं भंते !!